इकाई 5 अंतर्कालिक चयन – I*

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 कुज्नेत्स पहेली

5.2.1 चिरकालिक गतिरोध परिकल्पना

5.2.2 कुज्नेत्स का आनुभविक कार्य

5.3 दो–आवधिक मॉडल में फिशर का उपभोग सिद्धांत

5.3.1 अंतर्कालिक बजट बाध्यता

5.3.2 उपभोक्ता अधिमान

5.4 उपभोक्ता की इष्टतमीकरण समस्या

5.4.1 इष्टतम उपभोग पर आय में परिवर्तन का प्रभाव

5.4.2 इष्टतम उपभोग पर ब्याज दर में परिवर्तन का प्रभाव

5.4.3 ऋण पर बाध्यता

5.5 सार संक्षेप

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस स्थिति में होंगे कि –

- कुज्नेत्स पहेली की अवधारणा की व्याख्या कर सकें ;
- स्पष्ट कर सकें कि उपभोक्ता समय के साथ उपभोग पर किस प्रकार अनुकूलन करता है ;
- चिरकालिक गतिरोध की अवधारणा का वर्णन कर सकें ;
- अंतर्कालिक बजट बाध्यता की रचना कर सकें ;
- किसी अंतर्कालिक व्यवस्था में उपभोग पर आयवृद्धि के प्रभाव की व्याख्या कर सकें ; तथा
- कालांतर में उपभोग पर ब्याज दर में बदलाव के प्रभाव का विश्लेषण कर सकें।

5.1 प्रस्तावना

आपने पाठ्यक्रम BECC 101 के अंतर्गत व्यष्टि–अर्थशास्त्रीय सिद्धांत में यह जाना कि किसी परिवार अथवा व्यक्ति का उपभोग निर्णय वस्तुओं की कीमतों और बजट बाध्यता पर आधारित होता है। वस्तुतः व्यष्टि अर्थशास्त्र में किसी भी परिवार का चयन निर्णय किसी एकल समयावधि तक ही सीमित होता है। बहरहाल, जनसाधारण उपभोग, बचत, उधार आदि के संबंध में अपने विकल्प निरंतर चुनता ही रहता हैं। जब ये चयन समय के साथ होते हैं तो इन्हें 'अंतर्कालिक विकल्प निर्णय' कहा जाता है। इस इकाई में हम कालांतर में परिवारों के उपभोग निर्णय को ही अपनी चर्चा के केंद्र में रखेंगे। जैसा कि आप जानते हैं, उपभोग कुल माँग का एक बड़ा हिस्सा होता है, जो कि निवेश, राजकीय व्यय, निवल

* सुश्री वैशाखी मंडल, सहायक प्राध्यापक, इंद्रप्रस्थ महिला कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

निर्यात आदि अन्य सब क्षेत्रों को मिलाकर भी उनसे अधिक ही बैठता है। यद्यपि उपभोग में उतार–चढ़ाव जीडीपी के उतार–चढ़ाव (व्यापार चक्र में) के साथ ही अपना असर दिखाता है, यह परिमाण में जीडीपी के मुकाबले कुछ कम होता है। चूँकि वस्तुओं और सेवाओं के उपभोग का जन–साधारण द्वारा व्युत्पन्न उपयोगिता पर सीधा प्रभाव पड़ता है, इसलिए कुल स्तर पर इसका प्रभाव अर्थव्यवस्था के लिए कल्याणकारी निहितार्थ रखता है।

कीन्स द्वारा *साइकोलॉजिकल लॉ ऑफ कन्जप्शन* अर्थात् 'उपभोग का मनोवैज्ञानिक नियम' प्रतिपादित किए जाने के कुछ समय पश्चात ही अर्थशास्त्रियों ने केन्जियन अनुमानों का अनुभवजन्य परीक्षण शुरू कर दिया। यद्यपि केन्जियन उपभोग फलन को शुरुआत में सफलता मिली, जल्द ही कीन्स के इस अनुमान के बारे में विसंगतियां पैदा हुईं कि आय बढ़ने पर उपभोग करने की औसत प्रवृत्ति का ह्रास होता है। अनेक अर्थशास्त्रियों ने उपभोग संबंधी अपने उन्नत सिद्धांतों के माध्यम से इन विसंगतियों को स्पष्ट करने की कोशिश की।

यहाँ इस इकाई और अगली इकाई में हम कीन्स, साइमन कुज्नेत्स, इरविंग फिशर, फ्रेंको मोदिग्लिआनी, मिल्टन फ्रीडमैन, डेविड रिकार्डो, रॉबर्ट बैरो, रॉबर्ट हॉल आदि कुछ प्रमुख अर्थशास्त्रियों के विचार प्रस्तुत करेंगे। तत्पश्चात हम किसी परिवार के अंतर्कालिक उपभोग निर्णय पर सरकार की ऋण–वित्तपोषण नीति के पड़ने वाले प्रभाव पर भी चर्चा करेंगे।

5.2 कुज्नेत्स पहेली

जैसा कि हमने पाठ्यक्रम BECC 103 में देखा था, केन्जियन उपभोग फलन के दो प्रमुख अभिलक्षण होते हैं। पहला, सीमांत उपभोग प्रवृत्ति ($\text{MPC} = \Delta c/\Delta y$) शून्य और एक के बीच होती है। दूसरा, आय बढ़ने पर औसत उपभोग प्रवृत्ति ($\text{APC} = c/y$) में ह्रास देखा जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध (1939 – 1945) के दौरान कीन्स के विचार अनुभवजन्य प्रेक्षणों से भिन्न पाए गए।

5.2.1 चिरकालिक गतिरोध परिकल्पना

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान चूँकि अर्थव्यवस्था में निवेश के अवसर समाप्त हो गए थे, कीन्स की प्रस्थापना के पश्चात अर्थशास्त्रियों ने भविष्यवाणी की कि समय के साथ जब अर्थव्यवस्था की आय बढ़ेगी तो औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC) कम से कमतर होती जाएगी। साथ ही, बचत करने की औसत प्रवृत्ति (APS) उच्च से उच्चतर होती जाएगी, परंतु बचत को समाहित करने के लिए पर्याप्त लाभदायक निवेश अवसर नहीं होंगे। दूसरे शब्दों में, इन अर्थशास्त्रियों का पूर्वानुमान था कि जब तक सरकार कुल आय की तुलना में तेज दर से सरकारी व्यय में वृद्धि नहीं करेगी, अर्थव्यवस्था अनिश्चितकाल तक व्यापार मंदी झेलती ही रहेगी। इसे ही 'चिरकालिक गतिरोध परिकल्पना' कहा जाता है। इस परिकल्पना से उत्पन्न भय को वास्तविक रूप में निम्नलिखित कुल माँग समीकरण की सहायता से देखा जा सकता है –

$$\mathbf{y}_{\text{(वास्तविक आय)}} = \mathbf{c}_{\text{(वास्तविक उपभोग)}} + \mathbf{i}_{\text{(वास्तविक निवेश)}} + \mathbf{g}_{\text{(वास्तविक सरकारी व्यय)}}$$

दोनों पक्षों को ' y' से भाग देने पर हमें प्राप्त होता है –

$$\mathbf{1 = c / y + i / y + g / y} \qquad \ldots (5.1)$$

समीकरण (5.1) में आप देखेंगे दें कि c / y औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC) दर्शाता है। अतः कीन्स के अनुसार जैसे–जैसे समय के साथ y बढ़ता है, c / y गिरता जाता है, जबकि इसके विपरीत, बचत करने की औसत प्रवृत्ति (APS) = s / y बढ़ती ही रहती है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान लाभदायक निवेश के अवसरों की कमी के कारण यह सोचा

गया था कि जैसे–जैसे अर्थव्यवस्था सुधरेगी i / y नहीं बढ़ेगा। दूसरे शब्दों में, समीकरण (5.1) में, y के बढ़ने पर c / y गिर रहा है और i / y बढ़ नहीं रहा है।

उपर्युक्त का एक निहितार्थ यह भी होता है कि g / y को बढ़ाना है। इसमें वृद्धि का मतलब होगा –य (y) की तुलना में सरकारी व्यय तेज दर से बढ़ाना है। अन्यथा, अर्थव्यवस्था नहीं सुधरेगी, बल्कि वह गतिहीन हो जाएगी।

सौभाग्य से, द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद अर्थव्यवस्था को मंदी का कोई और दौर नहीं झेलना पड़ा। यद्यपि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की अवधि में अर्थव्यवस्था पहले से अधिक आय का लाभ उठा रही थी, इससे बचत दर (s / y) में कोई बड़ी वृद्धि नहीं हुई। अतः कीन्स का यह अनुमान कि आय बढ़ने पर औसत उपभोग प्रवृत्ति में ह्रास आएगा, सही सिद्ध नहीं हुआ। इसका तात्पर्य है कि चिरकालिक गतिरोध परिकल्पना बुरी तरह विफल रही।

5.2.2 कुज्नेत्स का आनुभविक कार्य

वर्ष 1946 में साइमन कुज्नेत्स ने अमेरिकी अर्थव्यवस्था के वर्ष 1836 से लेकर 1938 तक की एक काफी लंबी अवधि से जुड़े उपभोग और आय संबंधी आँकड़ों का अध्ययन किया। तत्पश्चात कुज्नेत्स ने प्रस्तुत आँकड़ों के माध्यम से दीर्घावधि उपभोग व्यवहार की दो महत्वपूर्ण विशेषताएँ सामने रखीं।

प्रथम, औसतन एक लंबी अवधि तक अभिभावी औसत उपभोग प्रवृत्ति (c / y) ने कोई अधोमुखी रुझान नहीं दिखाया जैसा कि कीन्स के उपभोग फलन द्वारा प्रतिपादित था। यह काफी लंबे समय तक काफी स्थिर बनी रही। इसका मतलब यह हुआ कि दीर्घ अवधि में MPC = APC अर्थात् सीमांत उपभोग प्रवृत्ति और औसत उपभोग प्रवृत्ति एक समान मान दर्शाते हैं। आपको याद होगा कि किसी भी केन्जियन उपभोग फलन पर हम औसत उपभोग प्रवृत्ति को उस सीधी सरल रेखा के ढ़लान द्वारा मापते है जो केंद्रबिंदु को उपभोग फलन के संबंधित बिंदु से जुड़ती है। इस प्रकार, आय बढ़ने पर औसत उपभोग प्रवृत्ति में ह्रास देखा जाता है। दूसरी ओर, हमने सीमांत उपभोग प्रवृत्ति को उपभोग फलन के ढ़लान के रूप में मापा। अब APC और MPC के बीच समानता तभी स्थापित की जा सकती है जब उपभोग फलन केन्द्रबिन्दु से होकर गुजरे (देखें चित्र 5.1)।

दूसरा, कुज्नेत्स के आँकड़ों के अनुसार, ऐसे किसी भी वर्ष जब औसत उपभोग प्रवृत्ति ($= c / y$) दीर्घावधि औसत c / y से नीचे रही हो तो इसे 'उत्कर्ष अवधि' कहा जाएगा। इसी प्रकार, ऐसे किसी भी वर्ष जब औसत उपभोग प्रवृत्ति ($= c / y$) दीर्घावधि औसत c / y से ऊपर रही हो तो इसे 'चरम मंदी' की अवधि कहा जाएगा। उपर्युक्त के पीछे की व्याख्या इस प्रकार है – किसी भी उत्कर्ष वर्ष में अर्थव्यवस्था की आय दीर्घावधि औसत आय से अधिक होती है।

केन्जियन उपभोग फलन के अनुसार औसत उपभोग प्रवृत्ति (c / y) में गिरावट तब आती है जब अर्थव्यवस्था विकसित होती है और उत्पादन उच्चतर स्तर पर पहुँच जाता है। इसे एक अन्य दृष्टि से देखें तो किसी वर्ष विशेष के लिए मान लीजिए कि c / y अनुपात औसत c / y अनुपात से कम है। इसका अर्थ है कि यह एक ऐसा वर्ष होना चाहिए जिसमें दीर्घावधि औसत y से अधिक आय हो और इस कारण उसे उत्कर्ष अवधि कहा जा सके। इसी प्रकार का तर्क चरम मंदी की अवधि के c / y को भी स्पष्ट करेगा।

कुज्नेत्स की इस आनुभविक खोज कि दशक–दर–दशक उपभोग और आय का अनुपात उल्लेखनीय रूप से स्थिर रहता है, ने कीन्स के इस अनुमान का खंडन किया कि आय बढ़ने के साथ औसत उपभोग प्रवृत्ति का ह्रास निश्चित ही होता है। कुज्नेत्स ने बताया कि महामंदी के वर्षों को छोड़कर, अमेरिकी अर्थव्यवस्था में औसत उपभोग प्रवृत्ति वर्ष

1836–1938 की अवधि में काफी स्थिर रहा था – यह 0.84 और 0.89 के बीच एक संकीर्ण सीमा में घटता–बढ़ता रहा। इस प्रकार, भले ही इस अवधि के दौरान आय में बहुत अधिक वृद्धि हुई हो, उपभोग आय के एक स्थिर अंश के रूप में ही कायम रहा। कुज्नेत्स की इस अनुभवजन्य खोज ने कीन्स के उपभोग सिद्धांत के केंद्रीय सिद्धांतों को असंगत करार दिया। मिल्टन फ्रीडमैन (1957) ने इस प्रतीयमानतः विरोधाभासी तथ्य को 'कुज्नेत्स पहेली' अथवा 'उपभोग पहेली' की संज्ञा दी।

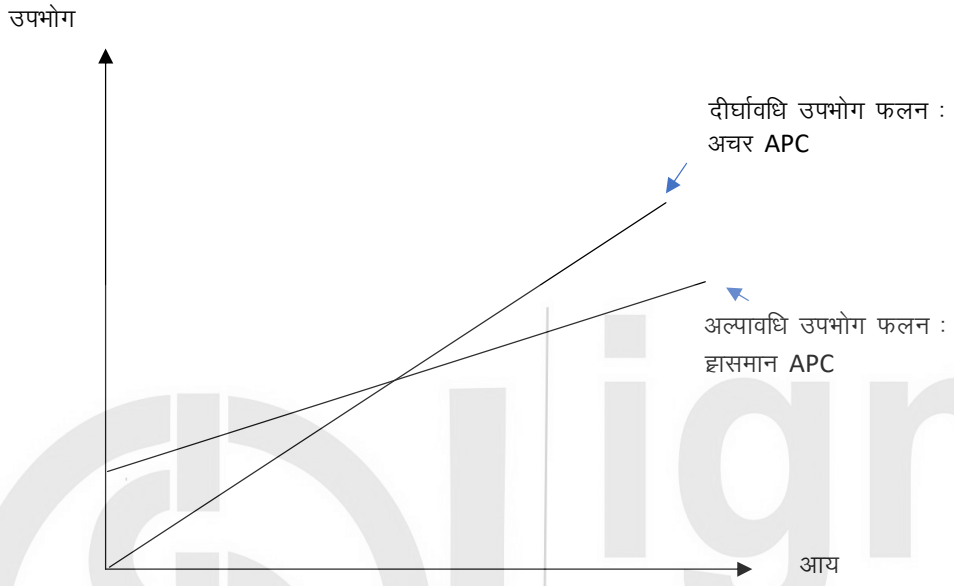

चित्र 5.1: कुज्नेत्स पहेली

दीर्घावधि उपभोग फलन और अल्पावधि उपभोग फलन आय y के साथ APC के प्रतीयमानतः अस्पष्ट अथवा असंगत संबंध को प्रदर्शित करते हैं।

चित्र 5.1 में आनुभविक साक्ष्य द्वारा सुझाए गए दो उपभोग फलन प्रस्तुत करता है। वह फलन जो केंद्रबिंदु से गुजर रहा है, दीर्घावधि उपभोग फलन है, जो कि कुल उपभोग व्यय और आय के दीर्घावधिक समय–शृंखला आँकड़ों के अध्ययन पर आधारित है। दीर्घावधि उपभोग फलन स्थिर औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC) का अस्तित्व दर्शाता है। दूसरी ओर, प्रतिनिध्यात्मक आँकड़ों और अल्पावधिक समय–शृंखला के आधार पर परिवारों का अल्पावधि उपभोग फलन है जो, दीर्घावधि उपभोग फलन की तुलना में अधिक समतल और जिसका धनात्मक अवरोधन है। अल्पावधि उपभोग फलन औसत उपभोग प्रवृत्ति में ह्रास का संकेत देता है।

केन्जियन उपभोग फलन अल्पावधि में कारगर सिद्ध हुआ है क्योंकि अल्पावधि उपभोग फलन ने औसत उपभोग प्रवृत्ति को ह्रासमान दर्शाया है, जैसा कि कीन्स ने अपने उपभोग सिद्धांत में प्रतिपादित किया था। बहरहाल, दीर्घावधिक समय–शृंखला के लिए दीर्घावधि उपभोग फलन स्थिर औसत उपभोग प्रवृत्ति दर्शाता प्रतीत हुआ। अतः, यदि हम इसमें समय आयाम जोड़ देते हैं तो आय के साथ औसत उपभोग प्रवृत्ति का संबंध परस्पर असंगत निकलता है। इसे ही प्रायः **कुज्नेत्स पहेली** के रूप में जाना जाता है। कुज्नेत्स की पहेली अर्थशास्त्रियों के समक्ष एक चुनौती पेश की, जिन्होनें यह समझाने की कोशिश की कि अलग–अलग समय आयामों के ये दो उपभोग फलन किस प्रकार एक दूसरे के अनुरूप हो सकते हैं।

सन 1940 के दशकांत तक यह स्पष्ट हो गया था कि उपभोग का कोई ऐसा सिद्धांत होना ही चाहिए जो तीनों देखी गई दृश्यघटनाओं का समाधान कर सके, यथा –

1. प्रतिनिध्यात्मक बजट अध्ययन (घरेलू उपभोग–आय डेटा) से पता चलता है कि जैसे–जैसे y बढ़ता है, c / y गिरता है, जिससे कि जनसंख्या के प्रतिनिधिक अंश में MPC < APC {केन्जियन उपभोग फलन के अनुरूप} हो।
2. व्यापार चक्र अथवा अल्पावधि संबंधी आँकड़े बताते हैं कि c / y अनुपात उत्कर्ष के दौरान औसत से कम होता है और चरम मंदी की अवधि में औसत से अधिक होता है। तदनुसार, अल्पावधि में जैसे–जैसे आय में उतार–चढ़ाव होता है, MPC < APC {केन्जियन उपभोग फलन के अनुरूप} हो जाता है।
3. दीर्घावधिक आँकड़े दर्शाते हैं कि जैसे–जैसे आय बढ़ती है, MPC = APC {केन्जियन उपभोग फलन के अननुरूप} हो जाता है।

कुज्नेत्स के इस निष्कर्ष को कि उपभोग आय का कोई फलन मात्र होने की बजाय अनुपात होता है, वर्ष 1946–उपरांत अवधि में उपभोग सिद्धांत को प्रतिमान के अनुसार ढालने की कोशिश में लगे अर्थशास्त्रियों ने समझाने की आवश्यकता समझी, साथ ही उपभोग निर्धारित करने में भी धन–संपत्ति / परिसंपत्ति के प्रतीयमान प्रभाव को स्पष्ट करने की भी।

5.3 दो–आवधिक मॉडल में फिशर का उपभोग सिद्धांत

केन्जियन उपभोग फलन ने वर्तमान उपभोग और वर्तमान आय के बीच संबंध पर बल दिया। ऊपर पाठांश 5.2 में हमने देखा कि केन्जियन उपभोग फलन दीर्घावधि उपभोग व्यवहार की व्याख्या नहीं कर सका। सहज रूप से यह समझना बहुत कठिन नहीं है। हर उपभोक्ता जानता है कि उसका वर्तमान उपभोग विकल्प न केवल वर्तमान आय पर निर्भर करता है बल्कि भावी उपभोग विकल्प, भावी आय और ऋणादान बाध्यता के प्रति उसकी प्राथमिकता पर भी निर्भर करता है। आज अधिक उपभोग का अर्थ होगा कि वह कल कम उपभोग करने में सक्षम होगा। यह एक समझौताकारी समन्वय होता है।

जब हम अपनी कार्रवाई चुनते हैं तो हम सभी जानबूझकर या अनजाने में इस समझौताकारी तालमेल से दो–चार होते हैं। उदाहरण के लिए, यदि आज कोई छात्र विशेष अपने खाली समय में नेटफ्लिक्स के माध्यम से टीवी पर बहुत सारे कार्यक्रम या सीरियल एक के बाद एक देखने का विकल्प चुनता है तो सेमेस्टर पास करने के लिए कल उसे अधिक घंटे अध्ययन करना होगा और उसके पास इत्मीनान से फुर्सत के पल बिताने के लिए बहुत कम समय होगा। आय–बचत समझौताकारी समन्वय के मामले में, यदि आप आज कम उपभोग करते हैं तो आप अधिक बचत करने में सक्षम होंगे। यदि आप अधिक बचत करते हैं तो आपको अपनी बचत पर अधिक ब्याज प्राप्त होगा और आपकी भावी आय में वृद्धि होगी। तदनुसार, आज कम खपत का अर्थ कल अधिक खपत होगा।

इरविंग फिशर ने उपभोक्ता व्यवहार का एक बहु–अवधि मॉडल विकसित किया जिसमें उन्होंने दर्शाया कि किस प्रकार एक विवेकशील, दूरंदेशी उपभोक्ता इस समझौताकारी समन्वय को समझता है और कालांतर में अपने उपभोग को इष्टतम रूप से विभाजित करता है।

5.3.1 अंतर्कालिक बजट बाध्यता

फिशर के अंतर्कालिक बजट निबाधों की व्याख्या करने के लिए हम केवल दो समयावधियाँ मानकर चलते हैं, यथा – वर्तमान और भविष्य। आगे हम यह मानकर चलते हैं कि हमारा प्रतिनिधि उपभोक्ता विवेकशील है और केवल दो समयावधियों के लिए ही जीता है।

हम यह भी मानकर चलते हैं कि वर्तमान समयावधि की शुरुआत में इस उपभोक्ता के पास कोई धन–संपत्ति / परिसंपत्ति नहीं है। यदि वह काम करता है तो उसे मजदूरी या श्रम आय प्राप्त होती है। चूँकि यह एक दो–अवधि मॉडल है, हमारे प्रतिनिधि उपभोक्ता की दूसरी समयावधि अर्थात् भविष्य की समयावधि के अंत में मृत्यु हो जाती है। अतः भावी पीढ़ी के लिए कोई वसीयत छोड़ने का प्रश्न ही नहीं उठता – भविष्य की समयावधि के अंत में कोई भावी पीढ़ी होगी ही नहीं।

हम इस मॉडल की रचना के लिए निम्नलिखित संकेतन का उपयोग करते हैं –

Y_1 = उपभोक्ता की वर्तमान समयावधि की श्रम आय।
Y_2 = उपभोक्ता की भविष्य की समयावधि की श्रम आय, जो कि उपभोक्ता को ज्ञात है।
C_1 = वर्तमान समयावधि में उपभोग।
C_2 = भविष्य की समयावधि में उपभोग।

अतः उपभोक्ता के समक्ष समझौताकारी वर्तमान उपभोग (C_1) बनाम भावी उपभोग (C_2) है।

आइए, तालिका 5.1 में उपभोक्ता के चयन संबंधी शृंखला–समूह को सूचीबद्ध करें।

तालिका 5.1: उपभोक्ता का विकल्प चयन

उपभोक्ता का विकल्प	निहितार्थ
केस 1: यदि उपभोक्ता प्रत्येक समयावधि में अपनी पूरी आय उपभोग पर खर्च करने का विकल्प चुनता है	$C_1 = Y_1$ और $C_2 = Y_2$
केस 2: यदि उपभोक्ता अपनी सारी आय एक ऐसे बैंक में जमा करता है जो पहली समयावधि में वास्तविक ब्याज दर ' r ' का भुगतान करता है	$C_1 = 0$ और $C_2 = Y_1(1 + r) + Y_2$
केस 3: यदि उपभोक्ता पहली समयावधि (वर्तमान समय) में अपनी आय में से कुछ को बचाने का विकल्प चुनता है	$C_1 = (Y_1 - S_1)$ और $C_2 = Y_2 + (1 + r) S_1$ (ध्यान दें कि $C_1 < Y_1$)
केस 4: यदि उपभोक्ता पहली (वर्तमान) समयावधि में अपनी आय से अधिक ब्याज दर ' r ' पर उधार लेकर खर्च करता है	$-S_1 = C_1 - Y_1$ और $C_2 = Y_2 - S_1 (1 + r)$ (ध्यान दें कि $C_1 > Y_1$)
केस 5: यदि उपभोक्ता भविष्य में अपनी आय से कम खर्च करने की योजना बना रहा हो	$C_1 = Y_1 + (Y_2 - C_2) / (1 + r)$ और $C_2 = (Y_2 - S_2)$ (ध्यान दें कि $C_2 < Y_2$)
केस 6: यदि उपभोक्ता दूसरी (भविष्य) समयावधि में कुछ भी खर्च नहीं करने की योजना बना रहा हो	$C_1 = Y_1 + Y_2 / (1 + r)$ और $C_2 = 0$

ऊपर दी गई तालिका 5.1 यह व्याख्या करती है कि हमारे प्रतिनिधि उपभोक्ता की आय किस प्रकार दोनों समयावधियों में उपभोग को अवरुद्ध करती है। आप देखेंगे कि हमने चर S का प्रयोग बचत और ऋणादान (कुछ न बचाना) के रूप में किया है। उपभोक्ता को तब उधार लेने की आवश्यकता होती है जब उसका उपभोग व्यय उसकी आय से अधिक हो जाता है और इस कारण ऋणात्मक बचत (–S) उधार लेने के बराबर होती है।

स्मरण करें कि r ही वास्तविक ब्याज दर है। सरलता के लिए हम मान लेते हैं कि ऋणदान (उधार दिए जाने से बचाई गई राशि) की दर और ऋणादान (उधार लेने) की दर (यथा, 'r') दोनों एक समान हैं।

बजट बाध्यता अवकलित करने के लिए, आइए, केस 3 (देखें तालिका 5.1) से आरंभ करें, जहाँ उपभोक्ता पहली अवधि में S_1 राशि [$S_1 = (Y_1 - C_1)$, चर C_1 का मान Y_1 से कम है] की बचत करता है, जो कि ब्याज दर ' r ' पर उधार दी जा रही है। अतः दूसरी अवधि में उपभोक्ता के पास दूसरी अवधि की आय Y_2 और पहली अवधि की संचित बचत उस बचत पर अर्जित ब्याज सहित, यथा

$S_1 (1 + r)$, उसके अधिकार में है। दूसरी अवधि के दौरान इस कुल आय का दूसरी अवधि में ही उपभोग किया जाना है, अर्थात् कोई वसीयत नहीं है (अपनी अवधारणा का स्मरण करें कि उपभोक्ता दूसरी अवधि के अंत में अपने पीछे कोई आय नहीं छोड़ता है)।

अतएव,

$$C_2 = (1+r) S_1 + Y_2$$

अथवा,

$$C_2 = (1+r) (Y_1 - C_1) + Y_2$$

इन पदों को पुनर्व्यवस्थित कर हम समीकरण को निम्नवत् लिख सकते हैं –

$$(1 + r) C_1 + C_2 = (1 + r) Y_1 + Y_2$$

उपर्युक्त समीकरण के दोनों पक्षों को $(1 + r)$ से विभाजित कर हमें प्राप्त होता है –

$$C_1 + \frac{C_2}{(1+r)} = Y_1 + \frac{Y_2}{(1+r)} \qquad \ldots (5.2)$$

समीकरण (5.2) दो समयावधियों के दौरान उपभोग और आय के बीच संबंध को दर्शाता है। यह किसी उपभोक्ता के अंतर्कालिक बजट बाध्यता को निरूपित करने का एक विशिष्ट तरीका है।

इस बजट बाध्यता का ढ़लान $(\mathbf{1 + r})$ है।

नीचे दिया गया चित्र 5.2 इस उपभोक्ता के अंतर्कालिक बजट बाध्यता को ही दर्शाता है –

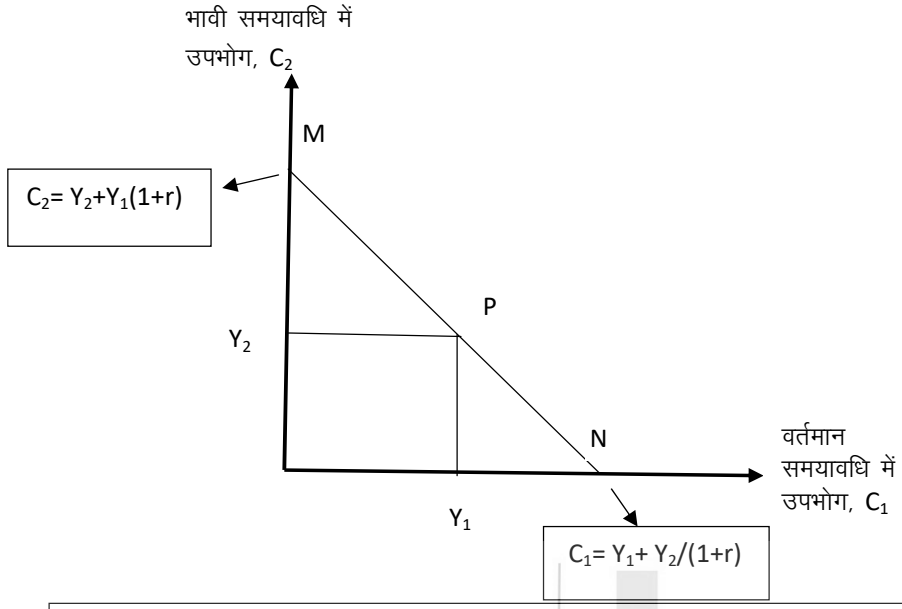

चित्र 5.2: अंतर्कालिक बजट बाध्यता

वर्तमान अवधि के अधिक उपभोग का अर्थ होगा – भावी समयावधि के उपभोग का कम होना। तदनुसार बजट बाध्यता ऋणात्मक ढ़लान होगा।

चित्र में 5.2 उपभोक्ता की दो–आवधिक आय को **बिंदु P** द्वारा दर्शाया गया है। यदि उपभोक्ता वर्तमान अवधि में उपभोग की 1 इकाई बचाता है तो वह वर्तमान अवधि के उपभोग की 1 इकाई से स्वयं को वंचित कर रहा है। यह बचाई गई राशि भविष्य के उपभोग की $(1 + r)$ इकाइयाँ बन जाती है। अतः वर्तमान उपभोग के संदर्भ में भविष्य के उपभोग की 1 इकाई का मान वर्तमान उपभोग का मात्र $1/(1+r)$ है। इसका अर्थ है कि भविष्य के उपभोग की 1 इकाई का वर्तमान मूल्य वर्तमान उपभोग का $1/(1+r)$ है। तदनुसार, भविष्य के उपभोग और भविष्य की आय को कारक $(1 + r)$ द्वारा छूट प्रदान की जाती है।

यदि उपभोक्ता के दो–आवधिक उपभोग का चयन **बिंदु P** का संपाती होता है, जो कि दो–आवधिक आय बिंदु भी है, तो उपभोक्ता किसी भी अवधि में न तो उधार ले रहा है और न ही बचत कर रहा है। अतः, $C_1 = Y_1$ और $C_2 = Y_2$ [**केस 1,** तालिका 5.1]।

केस 2 द्वारा बजट निबाध पर **बिंदु M** दर्शाया गया है (देखें तालिका 5.1)। यहाँ उपभोक्ता अपनी सारी वर्तमान आय बैंक में डालने का फैसला करता है, जबकि वर्तमान समयावधि में शून्य उपभोग (अर्थात् $C_1 = 0$, $S_1 = Y_1$) करता है। भविष्य की समयावधि में वह अपनी भावी समयावधि की आय Y_2 और बचत पर अर्जित संचित बचत एवं ब्याज, यथा $Y_1(1+r)$ का प्रयोग करता है। अतः, $C_2 = Y_1(1+r) + Y_2$ प्राप्त होता है।

यदि उपभोक्ता **बिंदु M** और **बिंदु P** के **बीच** ऐसा कोई भी बिंदु (बजट बाध्यता पर) चुनता हो जो C_1 और C_2 का उसका चयन प्रदर्शित करता हो तो वह पहली समयावधि में कम उपभोग कर रहा है और वह इस समयावधि में बचत भी कर रहा है **[केस 3,** तालिका 5.1]।

दूसरी ओर, यदि उसकी पसंद का C_1 और C_2 का संयोजन बजट बाध्यता पर **बिंदु P** और **बिंदु N** के **बीच** हो जाता है तो उपभोक्ता पहली समयावधि में जितना कमा सकता है उससे कहीं अधिक का उपभोग कर रहा है। अतः, इसलिए वह पहली समयावधि में उधार ले रहा है **[केस 4,** तालिका 5.1]।

यदि उपभोक्ता बिंदु **P** और बिंदु **N** के बीच ऐसा कोई भी बिंदु (बजट निबाध पर) चुनता हो जो C_1 और C_2 का उसका चयन प्रदर्शित करता हो तो उपभोक्ता पहली समयावधि में Y_1 (यथा, ऋणादान) से अधिक का उपभोग कर रहा है और वह दूसरी समयावधि में Y_2 से कम उपभोग कर रहा है **[केस 5,** तालिका 5.1]।

बजट बाध्यता पर **बिंदु N** तालिका 5.1 के **केस 6** को दर्शाता है। यहाँ उपभोक्ता वर्तमान समयावधि में उपभोग कर सब कुछ समाप्त कर देता है और भविष्य की समयावधि में उसका उपभोग शून्य रहता है (अर्थात् $C_2 = 0$)। तदनुसार, उसकी भावी समयावधि की आय, Y_2, का वर्तमान मूल्य $Y_2/(1+r)$ हो जाता है। अतः, उसका वर्तमान समयावधि का उपभोग $C_1 = Y_1 + Y_2/(1+r)$ ज्ञात होता है।

5.3.2 उपभोक्ता अधिमान

किसी भी उपभोक्ता का अधिमान वर्तमान समयावधि और भावी समयावधि संबंधी उसके उपभोग स्तर पर निर्भर करता है। किसी भी व्यक्ति के उपयोगिता फलन से हम अंतर्कालिक अनधिमान वक्रों की एक शृंखला प्राप्त कर सकते हैं। प्रत्येक अनधिमान वक्र कोई उपयोगिता स्तर इंगित करता है और उपभोक्ता वर्तमान अवधि के उपभोग और भविष्य की अवधि के उपभोग के विभिन्न संयोजनों के बीच उदासीन अर्थात् तटस्थ होता है। किसी भी अंतर्कालिक अनधिमान वक्र का ढ़लान वर्तमान उपभोग के लिए समय अधिमान की दर को दर्शाता है, जो कि भविष्य के उपभोग और वर्तमान उपभोग के बीच प्रतिस्थापन की सीमांत दर (MRS) के सिवा और कुछ नहीं होती।

यह हम पहले ही देख चुके हैं कि यदि उपभोक्ता आज अधिक उपभोग करने का फैसला करता है तो वह कम बचत कर पाएगा। फलतः, उसकी बचत पर ब्याज कम होगा और उस बचत पर अर्जित ब्याज (अथवा वह ऋण अधिक होगा जिसे भविष्य में चुकाने की आवश्यकता होगी) भी। साथ ही, भावी उपभोग के लिए उपलब्धता कम होगी। अतः, अन्तर्कालिक अनधिमान वक्र का ढ़लान ऋणात्मक होगा।

हम मानते हैं कि भविष्य और वर्तमान उपभोग के बीच प्रतिस्थापन की सीमांत दर घट रही है। इसका तात्पर्य यह है कि वर्तमान उपभोग की प्रत्येक समान उत्तरोत्तर अतिरिक्त राशि को भविष्य के उपभोग की पहले से कम मात्रा को छोड़कर मुआवजा दिया जाना चाहिए, ताकि उपभोक्ता उसी अनधिमान वक्र पर बना रहे। इन बातों को सरल व्यष्टि अर्थशास्त्र की शब्दावली में व्यक्त करने के लिए अंतर्कालिक अनधिमान वक्र मूल के प्रति उत्तल होते हैं।

वैयक्तिक उपभोक्ता की उपयोगिता : $U = U(C_1, C_2)$

जहाँ, $MRS_{C1, C2} = MU_{C1} / MU_{C2} < 0$ और ह्रासमान (घटता हुआ)

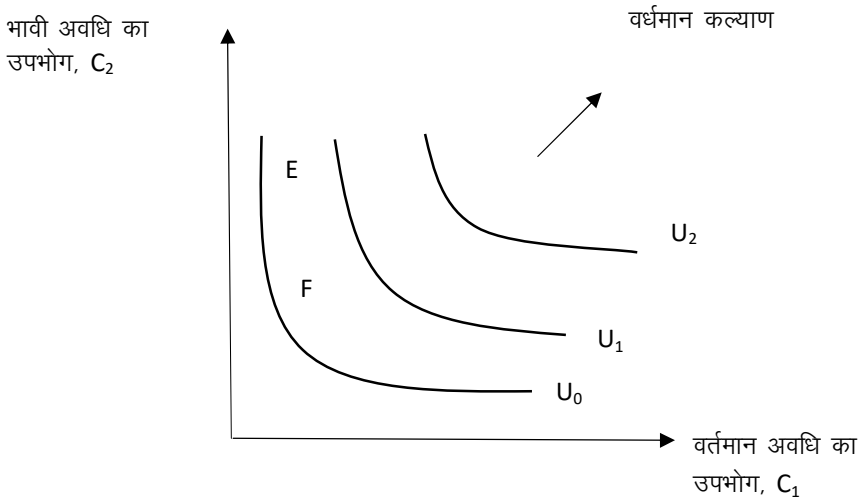

चित्र 5.3: अंतर्कालिक अनधिमान मानचित्र

अंतर्कालिक अनधिमान वक्रों की शृंखला पहली (वर्तमान) अवधि और दूसरी (भविष्य) अवधि के उपभोग पर उपभोक्ता की प्राथमिकताओं को दर्शाती है। अनधिमान वक्र जितना ऊँचा होगा, संतुष्टि अथवा कल्याण का स्तर भी उतना ही ऊँचा होगा।

यदि उपभोक्ता का एक अवधि का उपभोग बहुत अधिक है और दूसरी अवधि का उपभोग बहुत कम है तो वह अपर्याप्त या दुर्लभ वस्तु (उस अवधि का उपभोग जो उसके पास बहुत कम है) को अधिक महत्व देगा। अतः, वह अपर्याप्त या दुर्लभ वस्तु को थोड़ा और अधिक मात्रा में प्राप्त करने के लिए प्रचुर मात्रा वाली वस्तु (उस अवधि की वस्तु जो उसके पास बहुत अधिक थी) को छोड़ने के लिए तैयार हो जाएगा। यह स्पष्ट करता है कि बिंदु E और F के बीच अनधिमान वक्र इतना ढालू क्यों है।

बोध प्रश्न 1

1. प्रतिनिध्यात्मक आँकड़ों और समय–शृंखला आधारित आँकड़ों के बीच अंतर स्पष्ट करें।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. चिरकालिक गतिरोध परिकल्पना से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट करें।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

3. उपभोग पर प्रतिनिध्यात्मक आँकड़ों और समय–शृंखला आधारित आँकड़ों में किस प्रकार की विसंगति देखी जाती है? इसे कुज्नेत्स पहेली क्यों कहा जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

4. मान लीजिए कि एक उपभोक्ता दो समयावधियों तक जीवित रहता है। दोनों समयावधियों में उसकी आय Y_1 और Y_2 है जबकि उसका उपभोग C_1 और C_2 है। एक अंतर्कालिक बजट बाध्यता आरेखित करें। उसके लिए उपलब्ध वैकल्पिक उपभोग स्तरों को दर्शाने के लिए एक तालिका भी प्रस्तुत करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.4 उपभोक्ता की इष्टतमीकरण समस्या

केन्जियन उपयोग फलन, जो कि व्यापक प्रतिनिधित्व अध्ययन और अल्प समय–शृंखला में कारगर सिद्ध होता लगा, उपभोक्ताओं के व्यवहार संबंधी बारीकियों पर आधारित था। हालाँकि, जब केन्जियन उपभोग फलन कुज्नेत्स पहेली की व्याख्या नहीं कर सका, तो फ्रेंको मोदिग्लिआनी, मिल्टन फ्रीडमैन और रॉबर्ट हॉल जैसे अर्थशास्त्रियों ने दीर्घावधिक उपभोग फलन की प्रतीयमान सुगमता को स्पष्ट करने का प्रयास किया। उन्होंने कीन्स के व्यवहार संबंधी दृष्टिकोण को त्याग दिया और इष्टतमीकरण के मानक उपकरण का प्रयोग किया। वे इरविंग फिशर द्वारा प्रस्थापित उपभोक्ता व्यवहार के सिद्धांत पर बहुत अधिक निर्भर थे। इस तरह की इष्टतमीकरण समस्याओं में उपभोक्ता, वर्तमान उपभोग को केवल वर्तमान आय से संबद्ध मानने के विषय में अत्यंत अदूरदर्शी दृष्टिकोण रखने वाले कीन्स के उपभोक्ताओं के विपरीत दूरंदेशी एवं विवेकशील आर्थिक अभिकर्ता होते हैं।

अब जबकि हम अंतर्कालिक बजट बाध्यता और अंतर्कालिक अनधिमान वक्रों पर व्यापक चर्चा कर चुके हैं, अगला प्रश्न यह सामने आता है कि उपभोक्ता कितना उपभोग करे ताकि उसकी उपयोगिता उसके बजट निबाध के अधीन अधिकतम हो जाए? यदि हम अंतर्कालिक बजट बाध्यता और अनधिमान वक्रों को एक साथ रखते हैं तो हमें उपभोक्ता के इष्टतम उपभोग निर्णय का पूरा विश्लेषण प्राप्त हो जाता है। यह मानते हुए कि उपभोक्ता विवेकशील है और अपने कल्याण को अधिकतम करना चाहता है, वह पहली अवधि के उपभोग और दूसरी अवधि के उपभोग के ऐसे संयोजन को चुनना चाहेगा जो उसे उच्चतम

संभव अनधिमान वक्र पर रखे। यह चित्र 5.4 में दर्शाया गया है, जहाँ उपभोक्ता किफायती अंतर्कालिक उपभोग विकल्प चुनता है जो उसे अधिकतम कल्याण देता है।

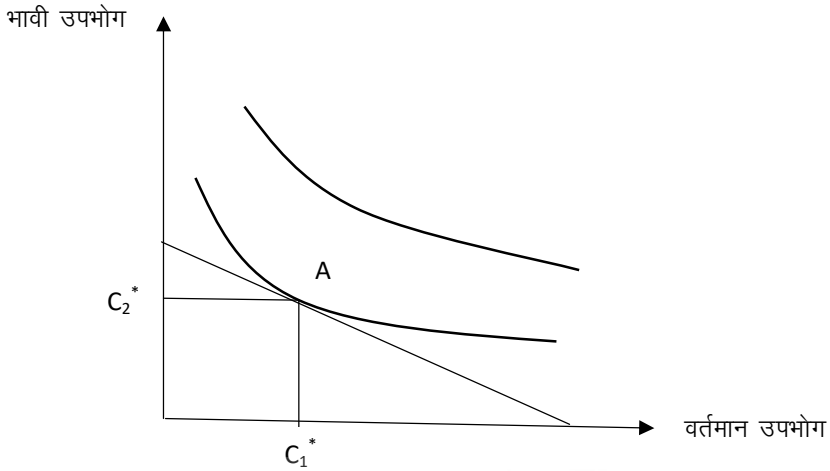

चित्र 5.4: उपभोक्ता का इष्टतम विकल्प

इष्टतम उपभोग स्तर बिंदु A पर है जहाँ एक अनधिमान वक्र अंतर्कालिक बजट लाइन को स्पर्श करता है।

उपभोक्ता उपभोग में अस्थिरता को नापसंद करते हैं – वे हर साल लगभग समान मात्रा में उपभोग पसंद करते है। यही **उपभोग समकरण** कहलाता है। इसके कारण उपभोक्ता संतुलन अनधिमान वक्र के किसी भी सिरे पर नहीं दिखाई पड़ती। निस्सन्देह, यदि उपभोक्ता वर्तमान अवधि के उपभोग का पुरजोर समर्थन करता हो तो उसकी संतुलन बजट रेखा के निचले खंड पर दिखाई पड़ेगी और इसका विपरीत भी सत्य है। इरविंग फिशर के मॉडल की एक विशिष्ट विशेषता यह है कि आर्थिक अभिकर्ता न केवल प्रतिक्रियाशील होते हैं और वर्तमान आय (केन्जियन उपभोग सिद्धांत से भिन्न) से बँधे होते हैं, वे भविष्य की आय के प्रति पूर्णतः दूरदर्शी भी होते हैं। वस्तुतः, उपभोक्ता वर्तमान अवधि का उपभोग तय करते समय भविष्य की आय को ध्यान में रखते हैं।

5.4.1 इष्टतम उपभोग पर आय में परिवर्तन का प्रभाव

अब इस बात पर चर्चा करेंगे कि कोई उपभोक्ता आय में किसी अस्थाई एकमुश्त वृद्धि के प्रति कैसे प्रतिक्रिया दिखाता है। आइए, बजट निबाध के समीकरण का स्मरण करें।

$$C_1 + C_2/(1+r) = Y_1 + Y_2/(1+r) \quad \text{बजट बाध्यता समीकरण}$$

यहाँ Y_1 अथवा Y_2 में कोई भी वृद्धि (ह्रास) बजट बाध्यता को बाहर की ओर (अंदर की ओर) खिसका देगी। कोई भी उच्च बजट बाध्यता उपभोक्ता को उच्च अनधिमान वक्र तक पहुँचने देता है। चित्र 5.5 उस प्रकरण की व्याख्या करता है जहाँ हम आय में वृद्धि (किसी भी अवधि की) के कारण अंतर्कालिक बजट बाध्यता का कोई बाहर की ओर खिसकाव देखते हैं। उपभोक्ता अपने उपभोग को संशोधित करता है और वर्तमान उपभोग एवं भावी उपभोग दोनों में से अधिक का चयन करता है।

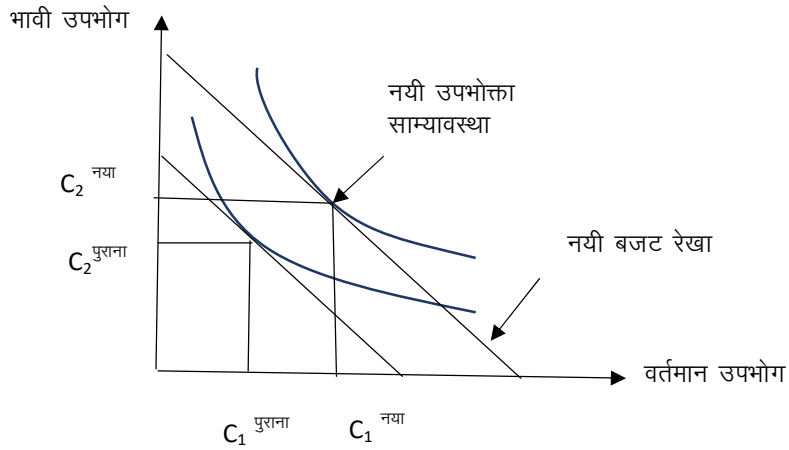

चित्र 5.5: इष्टतम उपभोग पर आय में वृद्धि का प्रभाव

वर्तमान अवधि अथवा भविष्य की अवधि की आय में वृद्धि के कारण बजट रेखा बाहर की ओर खिसक गई है। उपभोक्ता अब दोनों ही समयावधियों में अधिक उपभोग करता है।

यहाँ चित्र 5.5 में अनधिमान वक्र यह मानकर खींचे गए हैं कि दोनों अवधियों में उपभोग **सामान्य वस्तु** (अर्थात् ऐसी वस्तु जो उपभोक्ताओं की आय में वृद्धि के कारण अपनी माँग में वृद्धि का अनुभव करती है) है। यह अभिकथन बहुत सरल है, जैसा कि आरेख से स्पष्ट है, यथा – जब भी किसी अवधि की आय बढ़ती है तो सभी अवधियों का उपभोग बढ़ जाता है। इस तरह दोनों अवधियों में उपभोग पर बढ़ी हुई आय का प्रसार, इस बात की परवाह किए बिना कि किस अवधि की आय में वृद्धि होती है, उपभोग समकरण कहलाता है। ऐसा इसलिए हो रहा है कि यहाँ केन्जियन उपभोग सिद्धांत से भिन्न, उपभोक्ता दूरंदेशी है और आय में किसी भी अवधि की वृद्धि का आय के वर्तमान मूल्य पर वार्धिक प्रभाव पड़ता है। जिससे दोनों ही अवधियों में उपभोग पर सकारात्मक प्रभाव डालता है।

आय का वर्तमान मूल्य = $Y_1 + Y_2 / (1+r)$

इसी प्रकार, उपभोग का वर्तमान मूल्य = $C_1 + C_2/ (1+r)$

अतः, फिशर के अंतर्कालिक मॉडल से ज्ञात होता है कि उपभोग का वर्तमान मूल्य आय प्रवाह के वर्तमान मूल्य पर निर्भर करता है। इससे हमें सिद्धांत का सामान्य संरूपण निम्नवत् प्राप्त होता है –

$$C_t = f(PV_t);\ f' > 0 \qquad \ldots (5.3)$$

ऊपर दिया गया समीकरण (5.3) दो या दो से अधिक समयावधियों के लिए अंतर्कालिक बजट बाध्यता को फिर से लिखने के सिवा और कुछ नहीं है। यहाँ चर t समयावधि को इंगित करता है। इसलिए किसी भी समयावधि का उपभोग, C_t, केवल समयावधि t की आय पर ही निर्भर नहीं करता, बल्कि वह उपभोक्ता के भावी आय–प्रवाह (जीवन भर की आय), के वर्तमान मूल्य PV_t पर भी निर्भर करता है। आप देखेंगे कि हर उपभोक्ता भावी उपभोग से उत्पन्न होने वाली भविष्य की संतुष्टि को मानसिक रूप से छूट देता है। जिस दर पर वह भविष्य की संतुष्टि को छूट देता है वह व्यक्तिपरक होती है और उपभोक्ता की प्रकृति पर निर्भर करती है।

कुछ उपभोक्ता अधीर होते हैं – वे भविष्य की समयावधि की प्रतीक्षा नहीं करना चाहते। ऐसे उपभोक्ताओं का समय अधिमान अधिक होता है और वे भविष्य की आय पर उच्चतर

छूट दर (r) लागू करते हैं। जब दोनों में से किसी भी समयावधि की आय में वृद्धि होती है तो चूँकि दोनों समयावधियों का उपभोग 'सामान्य वस्तु' है, उपभोक्ता अपनी वार्धिक आय को दोनों अवधि के उपभोग पर फैला देता है।

बहरहाल, यदि हम यह मान लें कि उपभोक्ता अधीर है तो वह वर्तमान उपभोग पर अपनी वार्धिक आय का *उच्चतर* अंश और भावी उपभोग पर निम्नतर अंश आवंटित करेगा। दूसरी ओर, यदि उपभोक्ता द्वारा दी जाने वाली भविष्य में छूट की दर शून्य हो और दोनों में से किसी भी अवधि में आयवृद्धि होती हो तो उपभोक्ता अपनी वार्धिक आय को दोनों ही अवधियों के उपभोग पर *समान रूप से* आवंटित कर देता है।

5.4.2 इष्टतम उपभोग पर ब्याज दर में परिवर्तन का प्रभाव

अंतर्कालिक इष्टतमीकरण में ब्याज दर उपभोग के स्तर पर एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उपभोग पर ब्याज दर का प्रभाव, बहरहाल, कुछ जटिल होता है। फिशर के मॉडल से पता चलता है कि उपभोक्ता के अधिमानों के आधार पर वास्तविक ब्याज दर में परिवर्तन उपभोग बढ़ा अथवा घटा सकता है।

वर्तमान समय अवधि में उपभोक्ता दो प्रकार के होते हैं –

1. वह जो अपनी वर्तमान समयावधि की आय की तुलना में वर्तमान समयावधि में अधिक खर्च करता है (अर्थात् वर्तमान अवधि में उस पर कुछ उधार है), और
2. वह जो वर्तमान समयावधि में अपनी आय से कम खर्च करता है (अर्थात् चालू अवधि में कुछ बचत करता है)।

तदनुसार, पहले मामले में वह एक *वास्तविक ऋणग्राही* है और दूसरे मामले में वह एक *वास्तविक ऋणदाता* है।

हम यहाँ चर्चा के लिए दूसरे उदाहरण को लेंगे, यथा जहाँ उपभोक्ता एक वास्तविक ऋणदाता है। प्रथम उदाहरण (वास्तविक ऋणग्राही) एक असाइनमेंट मानकर आप स्वयं हल करने का प्रयास करें।

आइए, एक बार फिर से अंतर्कालिक बजट बाध्यता पर नजर डालें –

$$C_1 + C_2/(1+r) = Y_1 + Y_2/(1+r) \qquad \ldots (5.2)$$

चलिए, उस उदाहरण को लेते हैं जहाँ वास्तविक ब्याज दर में वृद्धि हुई है। बजट रेखा का ढ़लान

$(1 + r)$ है, इसलिए ढ़लान में वृद्धि होती है (पहली अवधि में बचत की समान राशि के साथ उपभोक्ता अब अधिक ब्याज अर्जित करता है, जिससे दूसरी अवधि में उसका उपभोग बढ़ जाता है)।

याद रखें कि किसी भी अवधि की आय में कोई परिवर्तन नहीं हो रहा है – केवल ब्याज दर में वृद्धि हुई है। अब आय प्रवाह (Y_1, Y_2) वाले किसी व्यक्ति पर विचार करें। यदि उसका उपभोग (Y_1, Y_2) हो तो वह चित्र 5.6 में बिंदु P पर होगा। बहरहाल, जैसा कि हमने माना है, वह वास्तविक ऋणदाता है। अतः, नई बजट रेखा चित्र 5.6 में बिंदु P से होकर गुजरेगी और ब्याज दर में वृद्धि नई बजट रेखा का ढ़लान बढ़ाएगी। अंतर्कालिक बजट निबाध बिंदु P से दाई ओर घूमता है।

चित्र 5.6 में उपभोक्ता वर्तमान समयावधि में एक वास्तविक ऋणदाता है। इसका सीधा–सा मतलब है कि उसकी वर्तमान अवधि का उपभोग (C_1) उसकी वर्तमान अवधि की आय (Y_1) से कम है।

ब्याज दर में वृद्धि उक्त दोनों समयावधियों में उसके उपभोग को कैसे प्रभावित करेगी? कुल प्रभाव को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, यथा – आय प्रभाव और प्रतिस्थापन प्रभाव।

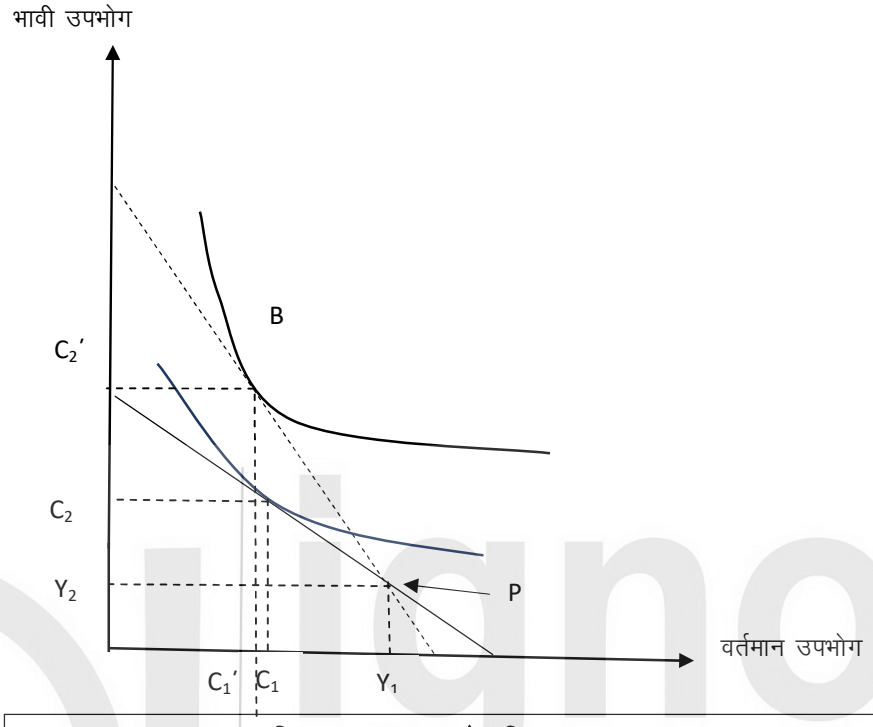

चित्र 5.6: ब्याज दर में वृद्धि का प्रभाव

जब उपभोक्ता वर्तमान समयावधि में एक वास्तविक ऋणदाता होता है तो ब्याज दर में वृद्धि से उसकी वर्तमान अवधि का उपभोग कम हो जाता है और उसकी भावी अवधि का उपभोग बढ़ जाता है।

प्रतिस्थापन प्रभाव : प्रतिस्थापन प्रभाव उपभोग में उस परिवर्तन को कहा जाता है जो दोनों ही समयावधियों में उपभोग के सापेक्ष मूल्य में परिवर्तन के परिणामस्वरूप होता है। जब ब्याज की दर बढ़ जाती है तो प्रत्येक इकाई जो वह बचाता है, उसे भावी अवधि में पहले की तुलना में अधिक उपभोग करने में सक्षम बनाती है। इसी कारण वर्तमान उपभोग की अवसर लागत अथवा वर्तमान उपभोग की सापेक्ष कीमत, जो कि $(1 + r)$ है, बढ़ गई है। इसी तर्क के अनुसार भविष्य के उपभोग का सापेक्ष मूल्य, $1/(1+r)$ नीचे चला गया है। प्रतिस्थापन प्रभाव उपभोक्ता को वर्तमान अवधि का उपभोग कम करने और भावी अवधि का उपभोग बढ़ाने के लिए प्रभावित करेगा।

आय प्रभाव : उपभोक्ता की आय में परिवर्तन के कारण दोनों ही समयावधियों में उपभोग में आने वाला परिवर्तन आय प्रभाव कहलाता है। यहाँ यद्यपि न तो Y_1 में और न ही Y_2 में वृद्धि हुई है, फिर भी ध्यान रखें कि उपभोक्ता एक वास्तविक ऋणदाता अथवा बचतकर्ता है। अतः जब ब्याज की दर बढ़ती है तो उसकी बचत पर ब्याज आय में वृद्धि होती है। साथ ही, उसकी जीवन भर की आय के प्रवाह में भी वृद्धि हुई है। चूँकि हम मानकर चले हैं कि उपभोग एक सामान्य वस्तु है, आय प्रभाव दोनों ही अवधियों में उपभोगवृद्धि करेगा।

उपभोक्ता का चयन आय प्रभाव और प्रतिस्थापन प्रभाव दोनों पर निर्भर करती है। दोनों प्रभावों का भावी अवधि के उपभोग पर वार्धिक प्रभाव पड़ता है। अतः, स्पष्ट रूप से भावी अवधि के उपभोग में वृद्धि होगी। बहरहाल, वर्तमान अवधि के उपभोग के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता है। चित्र 5.6 में हमने उस उदाहरण को दर्शाया है जिसमें प्रतिस्थापन

प्रभाव आय प्रभाव पर हावी है। तदनुसार, उच्चतर ब्याज दर उपभोक्ता के वर्तमान अवधि के उपभोग को कम कर देती है।

उसी उपमान को लागू करते हुए हम उपभोक्ता के वास्तविक ऋणग्राही होने के उदाहरण का विश्लेषण कर सकते हैं। हम उपभोग पर ब्याज दर में कमी के प्रभाव का भी विश्लेषण कर सकते हैं। इन्हें अभ्यास के रूप में छोड़ दिया गया है, जो कि आप स्वयं करेंगे।

5.4.3 ऋणादान बाध्यता

हम यह मानकर चले थे कि उपभोक्ता वर्तमान समयावधि में वास्तविक ऋणदाता (बचतकर्ता) अथवा वास्तविक ऋणग्राही हो सकता है। जब वह एक वास्तविक ऋणग्राही होता है तो वह अपने भविष्य का कुछ उपभोग वर्तमान समयावधि में ही कर लेता है। परंतु वास्तव में, एक सीमा होती है जहाँ तक उपभोक्ता उधार ले सकता है। इसे ही 'ऋणादान बाध्यता' कहा जाता है। अतः, अंतर्कालिक बजट निबाध के अतिरिक्त उपभोक्ता को निम्नलिखित ऋणादान बाध्यता का भी सामना करना पड़ता है –

$$C_1 \leq Y_1 \qquad \ldots (5.4)$$

उपर्युक्त दोनों बाध्यता, समीकरण (5.2) और (5.4), उपभोक्ता की चयन समूह को छोटा करते हैं। चित्र 5.7 का छायांकित क्षेत्र उपभोक्ता की इसी सीमित चयन समूह को दर्शाता है।

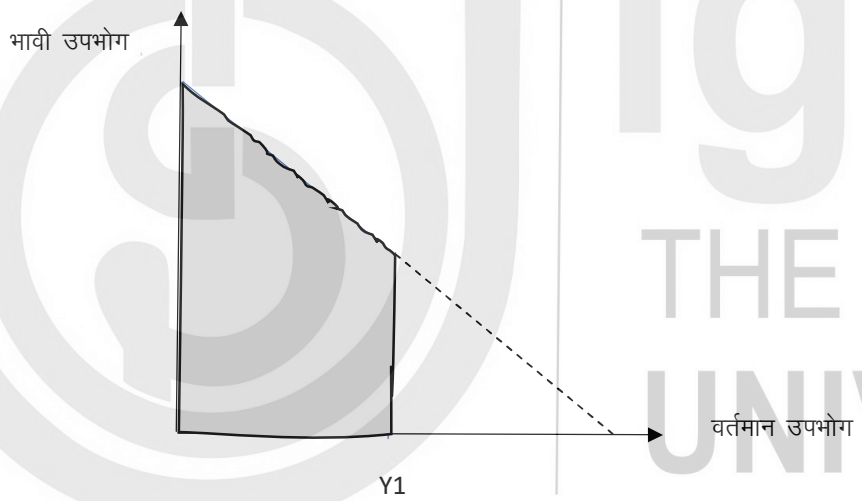

चित्र 5.7: ऋणादान बाध्यता के अनुसार उपभोग चयन समूह

ऋणादान निबाध का सामना कर रहे उपभोक्ता के पास दोनों अवधियों के लिए उपभोग के अपने विकल्पों के रूप में छायांकित क्षेत्र होगा।

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, उपभोक्ता दो प्रकार के होते हैं – वास्तविक बचतकर्ता और वास्तविक ऋणग्राही। इनमें से पहले प्रकार का उपभोक्ता वर्तमान समयावधि में अपनी आय से कम खपत करता है। दूसरी ओर, दूसरे प्रकार का उपभोक्ता वर्तमान समयावधि में अपनी आय से अधिक का उपभोग करता है। ऋणादान बाध्यता दोनों प्रकार के उपभोक्ताओं पर समान रूप से लागू होता है। इनमें एकमात्र अंतर यह है कि जब उपभोक्ता वास्तविक बचतकर्ता होता है तो उसे ऋणादान बाध्यता का आघात नहीं सहना पड़ता और उसके संतुलन बिंदु में कोई बदलाव नहीं होता। तदनुसार, ऋणादान बाध्यता वास्तविक बचतकर्ता पर बाध्यकारी नहीं होता (देखें चित्र 5.8)। दूसरी ओर, यदि उपभोक्ता एक वास्तविक ऋणग्राही है तो वह पहली अवधि में अपनी आय से अधिक का उपभोग करना चाहेगा, किंतु वह ऋणादान बाध्यता के कारण ऐसा नहीं कर सकता है। अतः, वह

पहली अवधि की आय से अपनी पहली अवधि के उपभोग को सीमित करने के लिए बाध्य होगा। इस प्रकार, ऋणादान बाध्यता वास्तविक ऋणग्राही पर बाध्यकारी होता है (देखें चित्र 5.9)।

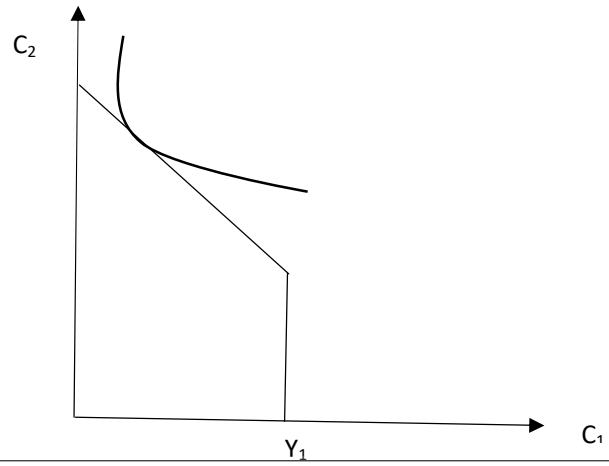

चित्र 5.8: ऋणादान बाध्यता बाध्यकारी नहीं है
उपभोक्ता पहली अवधि के उपभोग को आय से कम रखने का विकल्प चुनता है। इसलिए, ऋणादान बाध्यता उस पर बाध्यकारी नहीं होगा और संतुलन उपभोग अप्रभावित रहेगा।

एक बहुत ही रोचक तथ्य पर ध्यान दें। जब उपभोक्ता वास्तविक बचतकर्ता होता है तो ऋणादान निबाध उसके सामने होता है, परंतु यह बाध्यकारी नहीं होता। अतः उसे पहले की तरह केवल अंतर्कालिक बजट बाध्यता का ही सामना करना पड़ता है। इसी कारण दोनों अवधियों का उसका उपभोग उसकी आजीवन आय के वर्तमान मूल्य अर्थात् $Y_1+Y_2/(1+r)$ पर निर्भर करता है। दूसरी ओर, जब उपभोक्ता पहली अवधि में वास्तविक ऋणग्राही होता है तो ऋणादान निबाध उसके लिए बाध्यकारी होता है। इस स्थिति में ऋणादान निबाध की विद्यमानता के कारण उपभोक्ता को अपनी वर्तमान खपत को अपनी वर्तमान आय तक सीमित रखने के लिए बाध्य किया जाता है। अतः उसका उपभोग फलन $C_1 = Y_1$ और $C_2 = Y_2$ के रूप में लिखा जाएगा। यह बिल्कुल केन्जियन उपभोग फलन जैसा दिखता है, जहाँ उपभोग वर्तमान आय पर निर्भर करता है।

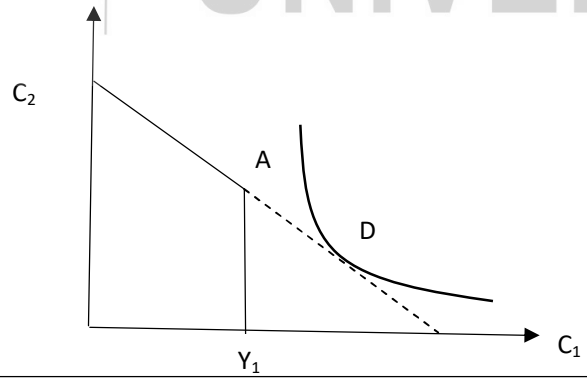

चित्र 5.9: ऋणादान निबाध बाध्यकारी है
उपभोक्ता अपनी आय से अधिक उपभोग करना चाहता है और संतुलन बिंदु D चुन लेता है। परंतु ऋणादान बाध्यता के कारण वह बिंदु A पर पहली अवधि के सर्वोत्तम उपलब्ध उपभोग अर्थात् पहली अवधि की आय को चुनने के लिए मजबूर है। अतः ऋणादान बाध्यता उस पर बाध्यकारी है।

बोध प्रश्न 2

1. फिशर के दो–आवधिक मॉडल में यह मान लिया जाता है कि उपभोग एक 'सामान्य वस्तु' है और उपभोक्ता एक वास्तविक ऋणग्राही है। यदि ब्याज दर में वृद्धि होती है तो दोनों समयावधियों के उपभोग पर इसके प्रभाव का विश्लेषण कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. मान लीजिए कि फिशर के दो–आवधिक मॉडल में उपभोक्ता पहली अवधि में एक वास्तविक ऋणग्राही है। यदि ब्याज दर घटती है तो दोनों समयावधियों में आय और उपभोग पर प्रतिस्थापन प्रभावों की चर्चा कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

5.5 सार संक्षेप

इस इकाई में हमने उपभोग सिद्धांत की पारंपरिक केन्जियन अवधारणा से विचलन का अध्ययन किया। मूल केन्जियन मॉडल में उपभोग वर्तमान आय पर निर्भर करता है और सीमांत उपभोग प्रवृत्ति (MPC) का मान औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC) से कम होता है।

केन्जियन मॉडल मुख्य रूप से एक अल्पावधिक मॉडल है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान, अमेरिकी अर्थव्यवस्था पर लंबे समय के आँकड़ो पर किए गए कुज्नेत्स के उपभोग सिद्धांत ने केन्जियन प्रस्थापना को अमान्य घोषित कर दिया। यह अर्थशास्त्रियों और नीति–निर्माताओं के लिए एक पहेली अथवा विरोधाभास के रूप में सामने आया।

कुज्नेत्स की पहेली का उत्तर खोजने की कोशिश में फ्रेंको मोदिग्लिआनी, अल्बर्ट एंडो, रिचर्ड ब्रमबर्ग, मिल्टन फ्रीडमैन और रॉबर्ट हॉल जैसे अनेक अर्थशास्त्रियों ने उपभोग फलन की विशेषताओं का अध्ययन करने के लिए उपभोक्ता व्यवहार के फिशर मॉडल का इस्तेमाल किया। फिशर ने एक नयी अवधारणा प्रस्तुत की, जहाँ उपभोक्ता अंतर्कालिक बजट निबाध के अधीन अपने आजीवन उपयोगिता फलन को इष्टतम करते हैं। फिशर के अनुसार, उपभोग व्यक्ति की आजीवन आय पर निर्भर करता है।

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1. समय–शृंखला आधारित आँकड़े आमतौर पर असतत और समान दूरी वाले समय अंतरालों पर एकत्र किए गए अवलोकनों का एक समूह होता है। यह समय की अवधि में आँकड़ो का समूह कहा जा सकता है। दूसरी ओर, प्रतिनिध्यात्मक आँकड़े ऐसे अवलोकन होते हैं जो किसी एक ही समय–बिंदु पर अलग–अलग व्यक्तियों या समूहों से आते हैं।
2. केन्जियन उपभोग फलन के अनुसार, आय बढ़ने पर उपभोक्ता की औसत प्रवृत्ति (APC) में गिरावट आती है। इसके परिणामस्वरूप, बचत करने की औसत प्रवृत्ति (APS) बढ़ेगी। यह प्रवृत्ति निवेश के अवसरों में गिरावट के साथ आती है, जिससे उत्पादन में गतिरोध देखा जाएगा। पाठांश 5.2.1 का अध्ययन करें और उत्तर दें।
3. प्रतिनिध्यात्मक आँकड़ों के अनुसार $MPC < APC$ होता है। दीर्घावधिक आँकड़ों के अनुसार $MPC = APC$ होता है। इसे ही कुज्नेत्स पहेली कहा जाता है क्योंकि इसे सबसे पहले साइमन कुज्नेत्स ने सामने रखा था। विस्तृत विवरण के लिए पाठांश 5.2 देखें।
4. देखें चित्र 5.2 व तालिका 5.1 और विश्लेषण करें।

बोध प्रश्न 2

1. यहाँ उपभोक्ता एक वास्तविक ऋणग्राही है और ब्याज दर में वृद्धि हुई है। ब्याज दर में वृद्धि से उपभोक्ता की आजीवन आय का प्रवाह कम हो जाएगा (चूँकि भविष्य की आय का वर्तमान मूल्य कम है, यह छूटप्राप्त है)। चूँकि हम मानते हैं कि उपभोग एक 'सामान्य वस्तु' है, आय प्रभाव के कारण दोनों समयावधियों में उपभोग में सापेक्ष गिरावट आएगी। प्रतिस्थापन प्रभाव के परिणामस्वरूप वर्तमान अवधि उपभोग घट जाएगा और भावी अवधि के उपभोग में वृद्धि होगी। आय प्रभाव के कारण दोनों ही अवधियों का उपभोग घट जाएगा। यदि प्रतिस्थापन प्रभाव आय प्रभाव से अधिक मजबूत होगा तो वर्तमान अवधि के उपभोग में स्पष्ट रूप से गिरावट आएगी और भावी अवधि के उपभोग में वृद्धि होगी। आरेख चित्र 5.6 के अनुसार बनाएँ।
2. यदि उपभोक्ता वर्तमान समयावधि में वास्तविक ऋणग्राही है तो उसका वर्तमान उपभोग व्यय वर्तमान अवधि की आय से अधिक है। जैसे–जैसे ब्याज की दर घटती है, वर्तमान उपभोग की अवसर लागत कम होती जाती है और भविष्य के उपभोग की सापेक्ष कीमत बढ़ जाती है। प्रतिस्थापन प्रभाव के कारण उपभोक्ता वर्तमान अवधि में पहले की तुलना में अधिक और भविष्य की अवधि में पहले की तुलना में कम उपभोग करेगा। चूँकि उपभोक्ता एक वास्तविक ऋणग्राही है, ब्याज दर में कमी उसे अमीर बनाती है। इस प्रकार, आय प्रभाव के कारण भविष्य के उपभोग और वर्तमान उपभोग दोनों में ही वृद्धि हो सकती है। यदि प्रतिस्थापन प्रभाव आय प्रभाव से अधिक मजबूत है तो वर्तमान उपभोग में वृद्धि होगी और भावी उपभोग में गिरावट आएगी। दूसरी ओर, यदि आय प्रभाव प्रतिस्थापन प्रभाव से अधिक मजबूत है तो वर्तमान उपभोग और भावी उपभोग दोनों में ही वृद्धि होगी। यह निश्चय ही बेहतर होगा कि यदि आप इसी के लिए आरेख बनाने का प्रयास करें और उसका प्रभाव स्वयं देखें।

इकाई 6 अंतर्कालिक चयन – II*

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 जीवन–चक्र परिकल्पना

6.2.1 परिकल्पना वर्णन

6.2.2 परिकल्पना का गणितीय विवेचन

6.2.3 परिकल्पना की कमियाँ

6.3 स्थायी आय परिकल्पना

6.3.1 परिकल्पना वर्णन

6.3.2 परिकल्पना के निहितार्थ

6.3.3 परिकल्पना की कमियाँ

6.4 सार–संक्षेप

6.5 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

6.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस स्थिति में होंगे कि–

- विभिन्न देशों में बचत दर में भिन्नता के कारण स्पष्ट कर सकें;
- उपभोग के निर्धारक तत्व पहचान सकें;
- उपभोग और आय के बीच गतिशील/गत्यात्मक संबंध पर प्रकाश डाल सकें;
- जीवन–चक्र परिकल्पना के मुख्य अभिलक्षण बता सकें; तथा
- स्थायी आय परिकल्पना के मुख्य अभिलक्षण बता सकें।

6.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में यह बताया गया था कि प्रतिनिध्यात्मक आँकड़ों पर आधारित उपभोग फलन की आकृति समय–शृंखला आँकड़ों के आधार पर आकलित उपभोग फलन से भिन्न होती है। किसी भी समय–बिंदु पर परिवार संबंधी सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि MPC < APC अर्थात् सीमांत उपभोग प्रवृत्ति का मान औसत उपभोग प्रवृत्ति के मान से कम होता है। हालाँकि, दीर्घावधिक समय–शृंखला आँकड़ों से पता चलता है कि MPC = APC अर्थात् उक्त दोनों मान बराबर होते हैं। तदनुसार, दीर्घावधिक समय–शृंखला आँकड़ों के आधार पर किया गया विश्लेषण कीन्स के उपभोग संबंधी मौलिक मनोवैज्ञानिक नियम के अनुरूप नहीं होता। इस विसंगति को 'कुज्नेत्स पहेली' के रूप में जाना जाता है क्योंकि इसे सर्वप्रथम अमेरिकी अर्थशास्त्री साइमन कुज्नेत्स द्वारा प्रस्तुत किया गया था। अब तक अल्पावधिक उपभोग फलन और दीर्घावधिक उपभोग फलन की आकृतियों के बीच असंगति को दूर करने के अनेक प्रयास किए जा चुके हैं। इस इकाई में हम दो परिकल्पनाओं पर चर्चा करेंगे, यथा –

1. जीवन–चक्र परिकल्पना, और
2. स्थायी आय परिकल्पना।

* सुश्री वैशाखी मंडल, सहायक प्राध्यापक, इंद्रप्रस्थ महिला कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

6.2 जीवन–चक्र परिकल्पना

अमेरिकी अर्थशास्त्री इरविंग फिशर के दो–आवधिक अंतर्कालिक मॉडल (1930) के अनुरूप सन 1950 के दशक में फ्रेंको मोदिग्लिआनी, रिचर्ड ब्रमबर्ग और अल्बर्ट एंडो ने अपने अध्ययनों की शृंखला के माध्यम से 'लाइफ साइकिल हाइपोथिसिस' (LCH) नामक एक मॉडल विकसित किया जिसे हम 'जीवन–चक्र परिकल्पना' के रूप में समझेंगे। इस परिकल्पना के अनुसार, सभी व्यक्ति अपनी आजीवन उपयोगिता को अधिकतम करते हैं। इस मॉडल में हम किसी ऐसे प्रतिनिधि उपभोक्ता पर विचार करते हैं जो विवेकशील और दूरदर्शी है। वह अपने जीवनकाल के संसाधनों (श्रम आय के वर्तमान मूल्य और वसीयत, यदि कोई हो) के आधार पर किसी भी समयावधि में उपभोग पर अपने संसाधनों को इष्टतम रूप से आवंटित करता है, अपनी आय के वर्तमान स्तर पर बिल्कुल भी नहीं। जीवन–चक्र परिकल्पना बताती है कि *'बचत के महत्वपूर्ण उद्देश्यों में से एक सेवानिवृत्ति के लिए प्रावधान करने की आवश्यकता होती है'*। आपको ध्यान से देखने पर ज्ञात होगा कि आय लोगों के जीवनकाल में लगातार भिन्न–भिन्न होती है। लोग उच्च आय के चरण के दौरान बचत करते हैं ताकि वे जीवन भर अपने उपभोग पथ को सुचारु बनाए रख सकें।

6.2.1 परिकल्पना वर्णन

वह आधारभूत (अपेक्षाकृत अधिक नियमनिष्ठ संस्करण) मॉडल जो बचत और धन के जीवन–चक्र पथ का वर्णन करता है, उपभोक्ता के अवसरों और अधिमानों के विषय में विभिन्न शैलीगत अवधारणाएँ प्रस्तुत करता हैं। ये अवधारणाएँ निम्नवत् हैं –

1. प्रतिनिधि उपभोक्ता की आय उसकी सेवानिवृत्ति तक स्थिर रहती है और उसके बाद शून्य हो जाती है।
2. उपभोक्ता विवेकशील और दूरदर्शी होता है। उसका एक सीमित जीवनकाल होता है।
3. उपभोक्ता जीवन भर स्थिर उपभोग करना पसंद करता है।
4. उपभोक्ता वसीयत के उद्देश्य से कुछ भी नहीं छोड़ता है।

किसी भी व्यक्ति के लिए सेवानिवृत्ति को आय विभिन्नता/परिवर्तन के प्रमुख स्रोतों में एक गिना जाता है। अधिकांश लोग रिटायर होने पर आय में गिरावट की उम्मीद करते हैं (हमारे मूल मॉडल में यह गिरकर शून्य हो जाती है)। फिर भी वे उपभोग के लिहाज से लगभग एक ही जीवन शैली (हमारे मूल मॉडल में यह पूर्णतः वही है) बनाए रखना चाहते हैं। सेवानिवृत्ति के बाद उसी जीवन शैली को बनाए रखने का एकमात्र तरीका उनके काम के वर्षों के दौरान बचत करना होता है। इस तरह की बचत को 'ककुद बचत' या 'हम्प सेविंग' कहा जाता है अर्थात् ऐसी बचत जो जीवन के किसी बाद के चरण में खर्च करने में सक्षम होने के लिए की जाती है।

मान लीजिए कि हमारे प्रतिनिधि उपभोक्ता ने 20 वर्ष की आयु में काम करना शुरू कर दिया और 65 वर्ष की आयु में सेवानिवृत्त हो गया। साथ ही, मान लें कि उसके 85 वर्ष तक जीवित रहने की आशा है और वह सेवानिवृत्त होने तक प्रति वर्ष Y (श्रम आय) अर्जित करने की अपेक्षा करता है। जब उसने 20 वर्ष की आयु में काम शुरू किया तो उनके पास W संपत्ति थी।

उसके कामकाजी जीवन की अवधि = $(65 - 20) = 45 = WL$

आजीवन संसाधन = कामकाजी जीवन अवधि × औसत श्रम आय = $WL \times Y$

20 वर्ष की आयु से गिनते हुए, वह कितनी अवधि जीवित रहता है

$= NL = (85 - 20) = 65$ वर्ष

व्यक्ति को अपने जीवनकाल (NL) में अपने आजीवन संसाधनों (WL × Y) का प्रसार करना चाहिए ताकि वह स्वयं को वार्षिक उपभोग C = (WL × Y) / NL की अनुमति दे सके।

इन परिस्थितियों में उपभोक्ता को अपने जीवन के पहले हिस्से में धन की कुछ पूँजी (सेवानिवृत्ति बीमा) जमा करने के लिए औसतन बचत करनी चाहिए, जो कि अंततः उसके जीवन के बाद के हिस्से में निर्बचत अर्थात् ऋणात्मक बचत के माध्यम से उपभोग का वहन करने के लिए उपयोग किया जाएगा।

नीचे दिए गए चित्र 6.1 में हमने उपभोक्ता की उसके जीवनकाल में आय, उपभोग और धन–संपत्ति का निरूपण किया है। इस आकृति में चटक नारंगी रेखा आय के प्रवाह को इंगित करती है, जो कि सेवानिवृत्ति पर रुक जाती है। उपभोक्ता काम के वर्षों के दौरान बचत करता है ताकि वह जीवन भर उपभोग (फीकी नारंगी रेखा) का स्थिर स्तर बनाए रखे।

अवर्धमान जनसंख्या की अवधारणा यह दर्शाती है कि युवा जनसंख्या का आकार लगभग वृद्ध जनसंख्या के समान ही है। उपर्युक्त का निहितार्थ यह है कि बचत की कुल दर शून्य होगी क्योंकि अपेक्षाकृत युवा परिवारों की सकारात्मक बचत सेवानिवृत्त परिवारों की निर्बचत से प्रतिसंतुलित होगी। धन–संपत्ति कुल मिलाकर स्थिर रहेगी, हालाँकि इसे अबचतकर्ताओं से बचतकर्ताओं को लगातार हस्तांतरित किया जा रहा है। अब मान लेते हैं कि उपभोक्ता के जीवन को तीन चरणों में बाँटा गया है, यथा – युवा, मध्यम आयु और वृद्धावस्था (मॉडल के गणितीय निरूपण में, अगले पाठांश में, हम इसे आगे t समयावधि तक बढ़ाएँगे)।

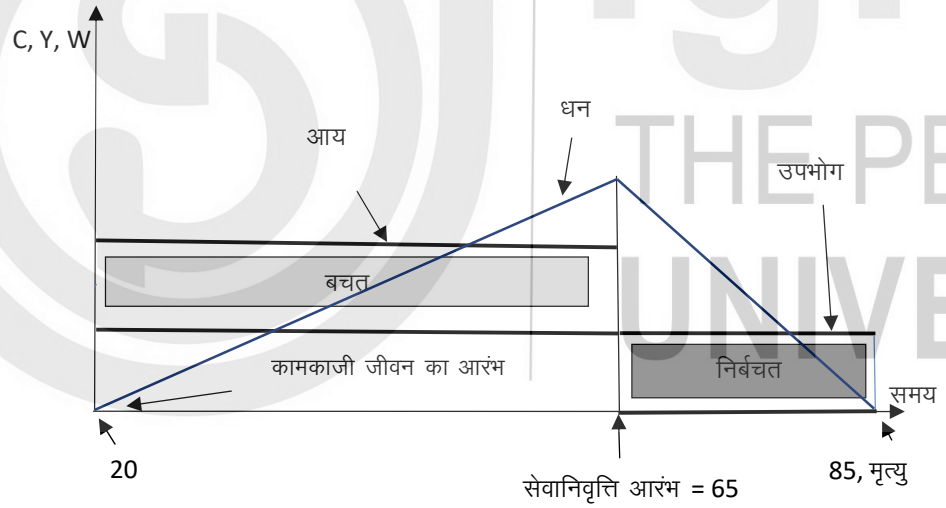

चित्र 6.1: अपने जीवन–चक्र पर उपभोक्ता का धन संचय
उपभोक्ता जीवन भर समकृत (नियत) उपभोग करना पसंद करता है। वह अपने काम के वर्षों के दौरान धन बचाता और जमा करता है। वह अपनी सेवानिवृत्ति के वर्षों के दौरान बिना किसी वसीयत के शून्य बचत के साथ सारा धन समाप्त कर देता है।

अब (चित्र 6.2) उपभोक्ता पहले दो चरणों के दौरान काम करता है और तीसरे चरण के दौरान एक सेवानिवृत्त जीवन व्यतीत करता है। युवावस्था में, जब उपभोक्ता ने अभी–अभी काम शुरू किया है, उसकी आय कम है। जैसा कि वह जानता है कि वह अपनी मध्यम आयु के दौरान अधिक कमाएगा, वह युवावस्था के दौरान बचत न (निर्बचत)करने की प्रवृत्ति रखेगा। मध्यम आयु के वर्षों में उसकी आय चरम पर पहुँच जाती है और व्यक्ति अपने पहले के ऋणों को चुकाने और सेवानिवृत्ति के वर्षों के लिए बचत करता है। जब कोई व्यक्ति अपने जीवन के सेवानिवृत्ति चरण में पहुँचता है तो उसकी आय (पेंशन, जो कि उसे

अपने पिछले काम के कारण प्राप्त होती है) में काफी गिरावट आती है और वह इसे काम के वर्षों के दौरान की गई बचत से पूरा करता हैं। अतएव, निर्बचत की दो अवधियाँ होती हैं यथा –

1. प्रारंभिक कार्य वर्ष (युवावस्था चरण) और
2. सेवानिवृत्ति चरण।

इसका तात्पर्य है कि बचत का केवल एक चरण होता है, यथा मध्यम आयु। इसीलिए, किसी भी व्यक्ति की बचत जीवन–चक्र में उसके चरण से निर्धारित होती है।

चलिए, मान लेते हैं कि भविष्य की उपयोगिता का वर्तमान मूल्य जो प्रतिनिधि उपभोक्ता को भविष्य के उपभोग से प्राप्त होना चाहिए, उसे δ दर पर छूट दी गई है। जब कोई उपभोक्ता वर्तमान उपभोग की कोई इकाई छोड़ देता है तो वह इकाई बचत हो जाती है। बचत से प्राप्त प्रतिफल 'r' होता है और यह उपभोक्ता को भविष्य के उपभोग की r इकाइयों का आनंद लेने की अनुमति देता है।

यदि $\delta < r$ तो अंतर्कालिक उपभोग संबंध से पता चलता है कि अपने भावी उपभोग के लिए बचत करना लाभकर होता है। इस प्रकार, व्यक्तिगत उपभोक्ता का उपभोग पथ समय के साथ बढ़ा हुआ रहेगा।

नीचे दिए गए चित्र 6.2 में हम उपभोग, आय और धन को y-अक्ष पर मापते हैं, जबकि x-अक्ष समय को दर्शाता है। हम एक धनात्मक ढ़लान वाली उपभोग रेखा का भी चित्रण करते हैं। आय रेखा उल्टे-U आकार की लाल रेखा द्वारा दर्शायी जाती है। आप देखेंगे कि पहले और तीसरे चरण में उपभोग रेखा आय रेखा से ऊपर है। तदनुसार, यहाँ निर्बचत दृष्टिगत होती है। इसके विपरीत, दूसरे चरण में आय उपभोग से अधिक है। तदनुसार, यहाँ बचत नजर आती है।

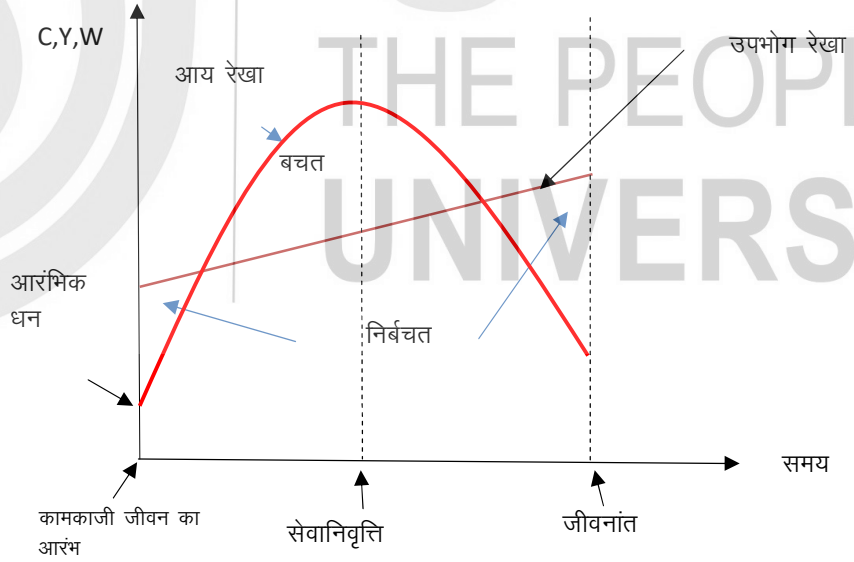

चित्र 6.2: किसी व्यक्ति के जीवन–चक्र में उपभोग, बचत और आय
प्रत्येक समय–बिंदु पर किसी व्यक्ति का उपभोग और बचत निर्णय, उसकी बाध्यताओं के अधीन समग्र जीवन–चक्र पर उपभोग के अपने पसंदीदा वितरण को प्राप्त करने के लिए उसके सचेत प्रयास को दर्शाता है।

किसी भी स्थिर अर्थव्यवस्था में शून्य निवल कुल बचत की मूल अवधारणा का अर्थ होता है कि धन का कुल पूँजी कालांतर में स्थिर रहेगा। मान लीजिए कि हम अर्थव्यवस्था की जनसंख्या को बढ़ने देते हैं, परंतु बिना किसी वसीयत के जीवन भर स्थिर आय और उपभोग की मूल अवधारणाओं को कायम रखते हैं। ऐसी स्थिति में, संचय चरण में युवा

जनसंख्या का अनुपात, निर्बचत चरण में वृद्ध जनसंख्या की तुलना में अधिक रहेगा। यह बचत के सकारात्मक निवल कुल प्रवाह को जन्म देगा, साथ ही, धन के भंडार में भी वृद्धि होगी।

अब मान लेते हैं कि जनसंख्या वृद्धि नहीं हुई है, परंतु उत्पादकता में वृद्धि के कारण समय के साथ आय में वृद्धि हुई है। फलतः, एक के बाद एक सहगण (आयु वर्ग) पिछले वाले की तुलना में अधिक आय अर्जित करेंगे। इस प्रकार, प्रत्येक क्रमिक सहगण पहले के सहगण की तुलना में उच्चतर स्तर पर उपभोग का आनंद लेगा (हालाँकि उपभोग स्तर उस सहगण के पूरे जीवन में स्थिर रहता है)। परिणामतः, किसी भी सक्रिय सहगण का लक्ष्य वर्तमान सेवानिवृत्त सहगण के उपभोग स्तर की तुलना में अपने लिए एक अधिक उपभोग पथ रखना होगा।

उपभोग के उक्त अधिक स्तर को बनाए रखने के लिए सक्रिय परिवारों को वर्तमान सेवानिवृत्त परिवारों के निर्बचत से अधिक के पैमाने पर बचत करनी होगी। इसका मतलब यह है कि भले ही हमारे पास स्थिर जनसंख्या हो, अर्थव्यवस्था में निवल सकारात्मक कुल बचत और धन का वर्धमान भंडार दृष्टिगत होंगे। वास्तव में, यदि आय किसी स्थिर दर से बढ़ती है तो बचत और धन दोनों एक ही दर से बढ़ते हैं, जिसका अर्थ है – एक स्थिर बचत–आय और धन–आय अनुपात।

6.2.2 परिकल्पना का गणितीय विवेचन

हमने इकाई 5 के पाठांश 5.3 में देखा कि फिशर के दो–आवधिक मॉडल में यदि उपभोग तुच्छ (inferior) वस्तु नहीं होता तो भी जब कभी किसी अवधि की आय बढ़ती है तो सभी अवधियों में उपभोग बढ़ जाता है। चलिए, इस विश्लेषण को एक बहु–आवधिक प्राधार तक विस्तारित करते हैं।

इस मॉडल का निहितार्थ यह है कि वर्तमान अवधि का उपभोग वर्तमान अवधि की आय पर निर्भर नहीं करता, बल्कि वह उपभोक्ता के संपूर्ण आय–प्रवाह के वर्तमान मूल्य पर निर्भर करता है। आय प्रवाह के वर्तमान मूल्य और वर्तमान उपभोग के बीच यही संबंध हमें उपभोग फलन का प्रथम सामान्य संरूपण देता है [पिछली इकाई से समीकरण (5.3) याद करें]।

$C_t = f(PV_t);\ f' > 0$

जहाँ PV_t समय t पर चालू एवं भावी आय का वर्तमान मूल्य है। इसे निम्नवत् दर्शाया जा सकता है –

$$PV_t = \sum \frac{y_t}{(1+r)^t}$$

यहाँ $t^{वीं}$ अवधि के लिए आय का वर्तमान मूल्य, y_t, भिन्न $\frac{y_t}{(1+r)^t}$ से दर्शाया जाता है। हम सभी समयावधियों के लिए आय के प्रवाह को जोड़ते हैं, यथा $t = 0$ से T अवधियों तक। उपभोक्ता के उपयोगिता फलन को निम्नवत् लिखा जा सकता है –

$$U = U(C_0, C_1, C_2, \ldots, C_T) \qquad \ldots (6.1)$$

जहाँ उपभोक्ता अपने कामकाजी जीवन के वर्षों (जिन्हें यहाँ '0' माना जाता है) से आरंभ कर T अधिक अवधियों तक जीवित रहता है। किसी बहु–आवधिक मॉडल में, चलिए, मान लेते हैं कि अंतर्निहित उपयोगिता फलन लघुगणकीय है, उसे कालांतर में योगात्मक रूप से अलग किया जा सकता है, और भविष्य की उपयोगिताओं को बट्टा दर δ पर छूट दी जाती

है। हमें प्रतिनिधि उपभोक्ता के लिए बजट बाध्यता $\sum \frac{C_t}{(1+r)^t} = \sum \frac{y_t}{(1+r)^t}$ के अधीन उपयोगिता अधिकतमकरण की प्रथम कोटि दशा ज्ञात करनी होगी।

उपभोक्ता i के लिए यदि PV_t^i बढ़ता है तो उसके सभी C_t^i लगभग आनुपातिक रूप से बढ़ेंगे।

अतएव, किसी व्यक्तिगत उपभोक्ता i के लिए हम उसके उपभोग फलन को निम्नवत् लिख सकते हैं –

$$C_t^i = k^i(PV_t^i);\ 0 < k^i < 1 \qquad \ldots (6.2)$$

यहाँ k^i प्रतिनिधि उपभोक्ता i की आय के वर्तमान मूल्य का अनुपात है, जो कि वह वर्तमान अवधि के उपभोग पर खर्च करता है।

यदि आयु और आय के आधार पर जनसंख्या वितरण अपेक्षाकृत स्थिर रहे और वर्तमान भावी उपभोग (अनधिमान वक्रों का आकार) के बीच अभिरुचि कालांतर में स्थिर रहे तो हम सभी व्यक्तिगत उपभोग फलनों को समीकरण (6.2) में एक स्थिर कुल उपभोग के रूप में जोड़ सकते हैं, यथा –

$$C_t = k(PV_t) \qquad \ldots (6.3)$$

एंडो और मोदिग्लिआनी ने समीकरण (6.3) में आय के PV पद को श्रम आय (y_t^L) और संपत्ति आय (y_t^P) में विभाजित किया। हम ब्याज दर r द्वारा इन दोनों ही प्रकार की आय में छूट देते हैं। चलिए, अब '0' को अपनी वर्तमान अवधि के रूप में लेते हैं, यथा –

$$PV_0 = \sum_{t=0}^{T} \frac{y_t^L}{(1+r)^t} + \sum_{t=0}^{T} \frac{y_t^P}{(1+r)^t} \qquad \ldots (6.4)$$

इस प्रकार, आय प्रवाह का वर्तमान मूल्य श्रम आय का वर्तमान मूल्य धन संपत्ति आय का वर्तमान मूल्य होता है।

यदि हम यह मानकर चलें कि संपत्ति बाजार यथोचित रूप से कुशल और स्थिर है तो संपत्ति की आय का वर्तमान मूल्य स्वयं संपत्ति का मूल्य ही होगा, यथा –

$$\sum_{t=0}^{T} \frac{y_t^P}{(1+r)^t} = a_0$$

अतः, समीकरण (6.4) को निम्नवत् लिखा जा सकता है –

$$PV_0 = y_0^L + \sum_{t=1}^{T} \frac{y_t^L}{(1+r)^t} + a_0 \qquad \ldots (6.5)$$

अब आप देखेंगे कि समीकरण (6.5) में श्रमिक की वर्तमान (चालू) आय (y_0^L) सुस्पष्ट है और संपत्ति आय a_0 सुस्पष्ट भी है और उपभोक्ता को ज्ञात भी। किंतु भविष्य की आय $y_1^L \cdot \cdots y_T^L$ सुस्पष्ट नहीं है और उसका अधिक से अधिक अनुमान ही लगाया जा सकता है। अब यह उपभोक्ता के लिए बहुत कठिन होगा कि वह भविष्य के प्रत्येक वर्ष की आय का अनुमान लगाए। मान लीजिए कि समय '0' में औसत प्रत्याशित श्रम आय y_0^e (भावी आय के विषय में '0' समय में जन्मी प्रत्याशा) है।

इसलिए वर्तमान अवधि '0' को छोड़कर, भावी ($T-1$ अवधियाँ) आय का वर्तमान मूल्य [समीकरण (6.5) का दूसरा पद] $(T-1)y_0^e$ के बराबर होगा। अतएव, समीकरण (6.5) को निम्नवत् लिखा जा सकता है –

$$PV_0 = y_0^L + (T-1)y_0^e + a_0 \qquad \ldots (6.6)$$

आइए, अब देखते हैं कि औसत प्रत्याशित श्रम आय y_0^e का मान कैसे निर्धारित किया जाता है। एंडो और मोदिग्लिआनी का कहना है कि औसत प्रत्याशित श्रम आय वर्तमान श्रम आय का एक गुणक मात्र होती है, यथा –

$$y_0^e = \beta y_0^L \qquad \ldots (6.7)$$

जहाँ β गुणक ही है जो शून्य से अधिक है।

उपर्युक्त अवधारणा का अर्थ है कि यदि वर्तमान आय बढ़ती है तो लोग भावी आय के लिए अपनी प्रत्याशाओं को ऊपर की ओर समायोजित करते हैं। फलतः, आय प्रवाह के वर्तमान मूल्य में ऊपर की ओर खिसकाव देखा जाता है। चूँकि वर्तमान उपभोग आय प्रवाह के वर्तमान मूल्य (समीकरण 6.5) पर निर्भर करता है, वर्तमान उपभोग भी बढ़ जाता है। इस तर्क–शृंखला के माध्यम से हम कह सकते हैं कि चालू अवधि की आय में बदलाव लोगों के आय प्रवाह के वर्तमान मूल्य को काफी हद तक बदल सकता है (क्योंकि β बड़ा हो सकता है)। वर्तमान उपभोग पर इसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ सकता है।

समीकरण (6.6) में $y_0^e = \beta y_0^L$ प्रतिस्थापित करने पर हमें प्राप्त होता है –

$$PV_0 = [1+\beta(T-1)]\, y_0^L + a_0 \qquad \ldots (6.8)$$

उपर्युक्त मानों को समीकरण (6.3) में प्रतिस्थापित करने पर हमें प्राप्त होता है –

$$C_0 = k\,[1+\beta(T-1)]\, y_0^L + ka_0 \qquad \ldots (6.9)$$

समीकरण (6.9) दीर्घावधिक उपभोग परिकल्पना (LCH) से प्राप्त एंडो–मोडिग्लिआनी उपभोग फलन है। आप देखेंगे कि किसी भी समयावधि t के लिए इस उपभोग फलन में अवरोधन ka_t और सकारात्मक ढ़लान $k\,[1+\beta(T-1)]$ नजर आते हैं। उपभोग की सीमांत प्रवृत्ति (यथा, उपभोग फलन का ढाल) ही y_t^L का गुणांक अर्थात् $k\,[1+\beta(T-1)]$ कहलाती है।

वार्षिक अमेरिकी आँकड़ों पर एंडो–मोदिग्लिआनी के शोध के आधार पर समीकरण (6.9) का एक प्रतिनिधिक सांख्यिकीय आकलन निम्नवत् दर्शाया जाता है –

$$c_t = 0.7y_t^L + 0.06a_t \qquad \ldots (6.10)$$

इस प्रकार, उक्त आकलन के अनुसार श्रम आय में से और संपत्ति में से सीमांत उपभोग प्रवृत्ति (MPC) के मान क्रमशः 0.7 और 0.06 हैं। याद रखें कि आगे हम इस निष्कर्ष पर तब वापस आएँगे जब खंड 6.3 में फ्रीडमैन की स्थायी आय परिकल्पना पर चर्चा की जाएगी।

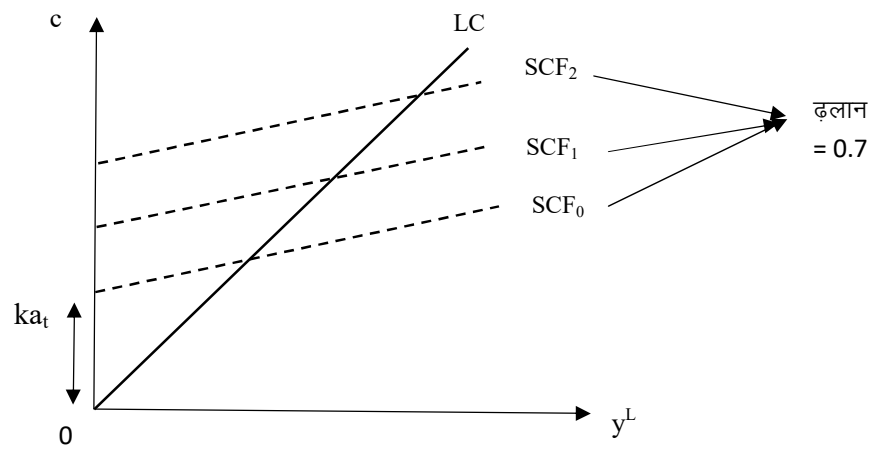

चित्र 6.3: एंडो एवं मोदिग्लिआनी का उपभोग फलन

आय में वृद्धि के साथ बचत और परिसंपत्ति में वृद्धि होती है। यह अल्पावधि उपभोग फलन (SCF) को ऊपर की ओर खिसकता है। इन अल्पावधि उपभोग फलनों का अनुरेखण करके हमें दीर्घावधि उपभोग फलन (LCF) प्राप्त होता है। अल्प अवधि में एंडो–मोडिग्लिआनी का उपभोग फलन केन्जियन उपभोग फलन जैसा दिखता है, जहाँ आय बढ़ने पर औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC) का मान गिर जाता है, जबकि दीर्घ अवधि में यह मान कीन्स के विपरीत स्थिर रहता है।

दीर्घावधिक उपभोग परिकल्पना (LCH) के अनुसार उपभोग और वर्तमान आय के बीच संबंध गैर–आनुपातिक होता है जैसा कि अल्पावधिक समय–शृंखला आकलन (समीकरण 6.10) में होता है।

समीकरण (6.10) में उपभोग फलन का अवरोधन परिसंपत्ति, a_t के स्तर से निर्धारित किया जाता है। अल्पावधि में परिसंपत्तियों के साथ चक्रीय उतार–चढ़ाव काफी स्थिर रहता है। इसीलिए अल्पावधि उपभोग फलन सकारात्मक अवरोधन, ka_t के साथ एक सकारात्मक ढलान वाली रेखा के रूप में नजर आता है।

याद रखें कि अवरोधन कालांतर में स्थिर नहीं रहता है। दीर्घ अवधि में जैसे–जैसे बचत बढ़ती है, वैसे–वैसे परिसंपत्तियों (a_t) में भी वृद्धि होती है। तदनुसार, उपभोग फलन ऊपर की ओर खिसकता है, जैसा कि चित्र 6.3 में दर्शाया गया है।

इसी चित्र में दर्शाए गए अनुसार, खिसकते अल्पावधि उपभोग फलन किसी दीर्घावधि उपभोग फलन का ही अनुसरण करते हैं। इस चित्र में अल्पावधि उपभोग फलन (SCF) प्रवणता 0.7 के साथ, जबकि दीर्घावधि उपभोग फलन (LCF) मूलबिंदु से गुजरता हुआ दर्शाया गया है।

यदि हम समीकरण (6.10) के दोनों पक्षों को कुल वास्तविक आय, y_t से विभाजित करते हैं तो हमें प्राप्त होता है –

$$\frac{c_t}{y_t} = 0 \cdot 7\frac{y_t^L}{y_t} + 0.06\frac{a_t}{y_t} \qquad \ldots (6.11)$$

उक्त समीकरण (6.11) में औसत c / y दो अनुपातों का योग है, यथा –

(i) कुल आय में श्रम आय का हिस्सा ($\frac{y_t^L}{y_t}$), और

(ii) पूँजी उत्पादन अनुपात का हिस्सा ($\frac{a_t}{y_t}$) ।

यदि उक्त दोनों अनुपात स्थिर रहते हैं तो c / y भी स्थिर रहता है। अमेरिकी आँकड़ों पर एंडो–मोडिग्लिआनी के अनुभवजन्य शोध ने पुष्टि की कि c / y दीर्घ अवधि में स्थिर रहता है।

एंडो–मोडिग्लिआनी का उपभोग फलन (देखें चित्र 6.3) तीन स्पष्ट दृश्यघटनाओं की पुष्टि करता है, यथा –

(i) यह प्रतिनिध्यात्मक बजट अध्ययनों के $MPC < APC$ परिणाम की व्याख्या करता है;

(ii) यह औसत उपभोग प्रवृत्ति की दीर्घावधिक स्थिरता की व्याख्या करता है; और

(iii) यह उपभोग निर्णय में व्याख्यात्मक चर स्वरूप परिसंपत्तियों को शामिल मानकर चलता है।

6.2.3 परिकल्पना की कमियाँ

जीवन–चक्र की परिकल्पना इस अर्थ में कुछ आकर्षक है कि यह फिशर के मूल अंतर्कालिक इष्टतमीकरण से निकटता दर्शाती है। यह अपने विश्लेषण में अनेक महत्वपूर्ण कारकों जैसे जनसंख्या वृद्धि, उत्पादकता वृद्धि, आय वृद्धि, सामाजिक सुरक्षा उपायों, बचत योजनाओं आदि को सामने लाता है। यह परिकल्पना अर्थव्यवस्था के लिए निवल कुल बचत प्रवाह पर इन कारकों के और अर्थव्यवस्था के धन भंडार के प्रभाव पर चर्चा करती है। हालाँकि, जीवन–चक्र परिकल्पना की कुछ आधारों पर आलोचना भी की गई है।

जनसंख्या के आयु प्राधार और अर्थव्यवस्था में कुल बचत के बीच संबंध एक विवाद का विषय रहा है। दो–आवधिक मॉडल में, यदि जनसंख्या में वृद्धि होती है तो अबचतकर्ताओं की संख्या बचतकर्ताओं की संख्या से अधिक हो जाएगी। इससे ऐसी स्थिति पैदा हो सकती है जहाँ अर्थव्यवस्था में नकारात्मक निवल बचत दिखाई दे। इसके अलावा, यह मान लेना अवास्तविक ही होगा कि सेवानिवृत्त लोगों की आय शून्य है। सेवानिवृत्त लोगों के लिए वृद्धावस्था पेंशन जैसे विभिन्न सामाजिक सुरक्षा उपाय विद्यमान हैं।

यदि हम समीकरण (6.10) को शाब्दिक रूप से लें तो वर्तमान श्रम आय में समग्र वृद्धि से वर्तमान उपभोग में 70 प्रतिशत तक की वृद्धि होगी, जो कि कुछ हद तक अधिक है। यह निष्कर्ष एंडो–मोडिग्लिआनी के वर्तमान श्रम आय और औसत प्रत्याशित श्रम आय के बीच संबंध के सन्निकटन के कारण संभव हुआ था (याद करें $y_0^e = y_0^L$)।

साधारण जीवन–चक्र परिकल्पना वृद्ध जन के अबचतकारी व्यवहार की पूरी तरह से व्याख्या नहीं कर सकती है। अनेक अध्ययनों के अनुसार, बुजुर्ग लोग इतनी जल्दी निर्बचत नहीं अपनाते जितना कि यह परिकल्पना बतलाती है। व्यय की अप्रत्याशितता और वसीयत छोड़ने की इच्छापूर्ति हेतु अपने सरोकार के कारण वृद्ध जन अपनी धन–संपत्ति को इतनी जल्दी नहीं घटाते जितना कि यह मॉडल कहता है।

बोध प्रश्न 1

1) मान लीजिए कि कोई व्यक्ति 20 साल की उम्र में अपना कामकाजी जीवन शुरू करता है। अपनी योजना के अनुसार वह 65 साल की आयु तक काम करेगा और 80 साल की आयु में मर जाएगा। उसकी वार्षिक श्रम आय रुपये 30,000 है। वह अपने जीवन भर की कमाई को जीवन के वर्षों की संख्या में फैलाता है। उसका वार्षिक उपभोग व्यय कितना होगा? उसकी सीमांत उपभोग प्रवृत्ति (MPC) भी ज्ञात करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) मान लीजिए कि कोई व्यक्ति 4 अवधियों तक जीवित रहता है और पहले तीन अवधियों में ₹ 30, ₹ 60 व ₹ 90 कमाता है और चौथी अवधि में जब वह सेवानिवृत्त होता है तो ₹ 0 कमाता है।

मान लें कि ब्याज दर शून्य है। वह अपने पूरे जीवन चक्र में स्थिर उपभोग प्रवाह बनाए रखना चाहता है। निर्धारित करें कि वह किस अवधि में सबसे अधिक बचत करता है।

व्यक्ति को पहली अवधि के अंत में अप्रत्याशित रूप से ₹ 15 का धन प्राप्त होता है। यदि वह पुनर्गणना करता है तो दूसरी अवधि के बाद उसके उपभोग व्यय में कितना परिवर्तन होगा?

.....

.....

.....

.....

.....

6.3 स्थायी आय परिकल्पना

मिल्टन फ्रीडमैन ने वर्ष 1957 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'ए थ्योरी ऑफ कंजम्पशन फंक्शन' में स्थायी आय परिकल्पना (PIH) विकसित की। इस परिकल्पना का मूल तर्क यह है कि लोग अपने वर्तमान उपभोग की योजना अपने जीवनकाल में अपनी औसत प्रत्याशित आय के आधार पर बनाते हैं, न कि उनकी वर्तमान अवधि की आय के आधार पर।

स्थायी आय परिकल्पना बताती है कि किसी परिवार का उपभोग और बचत का निर्णय उसकी स्थायी आय में परिवर्तन से किस प्रकार प्रभावित होता है। इस परिकल्पना ने कुज्नेत्स की उपभोग पहेली के लिए एक व्याख्या प्रस्तुत की। इसके अलावा, इस परिकल्पना ने माँग प्रबंधन संबंधी कुछ केन्जियन अवधारणाओं पर सवाल भी उठाया।

फ्रीडमैन के अनुसार, आय के दो घटक होते हैं, यथा – स्थायी और अस्थायी।

उक्त परिकल्पना के अनुसार, यदि परिवार यह मानता है कि आय में परिवर्तन अस्थायी अथवा क्षणिक है तो वह अपने उपभोग प्रतिमान में बदलाव नहीं करता है।

6.3.1 परिकल्पना वर्णन

'स्थायी आय' और 'स्थायी उपभोग' संबंधी अवधारणाएँ स्थायी आय परिकल्पना के सैद्धांतिक विश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये दोनों ही अवधारणाएँ व्यक्तिगत उपभोक्ता इकाई, यथा परिवार, के लिए सुस्पष्ट नहीं होतीं।

मान लीजिए y किसी समयावधि, माना एक वर्ष, के दौरान किसी उपभोक्ता की मापी गई आय है। फ्रीडमैन ने इस मापित आय को दो घटकों के योग के रूप में लिया, यथा – स्थायी आय (y_p) और अस्थायी आय (y_t)।

$$y = y_p + y_t \qquad \ldots (6.12)$$

स्थायी आय आमदनी का वह घटक है जो उपभोक्ता की संचित बचत, उसके कौशल, उसकी क्षमता, व्यवसाय, आर्थिक क्रियाकलाप के स्थान आदि अनेक कारकों पर निर्भर करता है। दूसरी ओर, आय के अस्थायी घटक की व्याख्या आकस्मिक, अप्रत्याशित और अननुमेय के रूप में की जा सकती है। अस्थायी आय घटक को जन्म देने वाले कुछ कारक व्यक्तिगत उपभोक्ता–विशिष्ट होते हैं (उदाहरण के लिए, बीमारी, गलत अनुमान, आदि)। अस्थायी आय के पीछे समूह–विशिष्ट कारक भी हो सकते हैं (उदाहरण के लिए, किसी इलाके में अनावृष्टि का प्रभाव, प्रवासी श्रमिकों पर किसी वायरस का सर्वव्यापी प्रभाव, आदि)।

यदि हम व्यक्तिगत विशिष्ट कारकों पर विचार करते हैं तो यादृच्छिक उपभोक्ताओं के समूह के लिए परिणामी अस्थायी घटक औसत ही होगा और समूह की औसत मापी गई आय, आय के औसत स्थायी घटक के बराबर होगी। इसका अर्थ है कि औसत अस्थायी आय शून्य होगी।

इसी प्रकार, c उपभोक्ता के मापे गए उपभोग को निरूपित करता है और दो भागों से बना होता है, यथा –

(i) स्थायी घटक (c_p) और

(ii) अस्थायी घटक (c_t)।

समीकरण के रूप में इन भागों को निम्नवत् दर्शाया जाता है –

$$c = c_p + c_t \qquad \ldots (6.13)$$

पूर्व की ही भाँति, अस्थायी घटक उपभोग को जन्म देने वाले कुछ कारक व्यक्तिगत उपभोक्ता–विशिष्ट होते हैं (जैसे अचानक बीमारी), और कुछ समूह–विशिष्ट होते हैं (जैसे दीर्घकालिक कड़ाके की सर्दी अथवा भरपूर फसल)।

पहले मामले में अस्थायी घटक औसत होगा (इसका अर्थ है कि समूह का अस्थायी उपभोग शून्य होगा) और बाद के मामले में स्थिति के आधार पर औसत अस्थायी उपभोग या तो सकारात्मक होगा या फिर नकारात्मक।

आप देखेंगे कि व्यक्तिगत उपभोक्ता से यह अपेक्षा नहीं की जाती है वह 'स्थायी' शब्द के सटीक अर्थ से जुड़े ही। सिद्धांततः स्थायी और अस्थायी के बीच के अंतर करने का अभिप्राय अपनी व्याख्या वास्तविक उपभोग और उपभोक्ता के व्यवहार के अनुरूप आय संबंधी आँकड़ों द्वारा किए जाने से होता है।

एंडो–मोडिग्लिआनी के साथ–साथ फ्रीडमैन भी यह मानकर चलते हैं कि उपभोक्ता अपने जीवनकाल में अपने उपभोग को समकृत करना चाहता है। यह उस समीकरण को जन्म देता है जो स्थायी आय और स्थायी उपभोग के बीच संबंध का वर्णन करता है, जहाँ किसी भी उपभोक्ता का स्थायी उपभोग उसकी स्थायी आय के समानुपाती होता है, यथा –

$$c_p^i = k^i y_p^i \qquad \ldots (6.14)$$

समीकरण (6.14) में मूर्धक्षर i व्यक्तिगत उपभोक्ता को निरूपित करता है।

यहाँ चर k^i निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करता है –

(i) ब्याज की वह दर जिस पर व्यक्तिगत उपभोक्ता उधार देता है अथवा उधार लेता है,

(ii) वह आपेक्षिक महत्व जो व्यक्तिगत उपभोक्ता संपत्ति और गैर–संपत्ति आय को देता है, और

(iii) बचत की तुलना में उपभोग की दिशा में व्यक्ति की अभिरुचियाँ और प्राथमिकताएँ।

यदि हम यह मान लें कि ये कारक उपभोक्ता के आय स्तर पर निर्भर नहीं करते हैं तो हम सभी आय वर्गों के k^i का औसत $\bar{k}$ के रूप में ले सकते हैं। अतएव, किसी भी आय वर्ग के औसत स्थायी उपभोग ($\overline{c_p^i}$) और आय वर्ग की औसत स्थायी आय ($\overline{y_p^i}$) के बीच यही संबंध निम्नवत् लिखा जा सकता है –

$$\overline{c_p^i} = \bar{k}\overline{y_p^i} \qquad \ldots (6.15)$$

समीकरण (6.15) में मूर्धक्षर i व्यक्तिगत उपभोक्ता को निरूपित करता है।

फ्रीडमैन ने अस्थायी घटक की विशेषताओं को निर्दिष्ट करते हुए अपनी परिकल्पना प्रस्तुत की। इस परिकल्पना के अनुसार, आय और उपभोग के अस्थायी घटक एक दूसरे के साथ और तदनुरूप स्थायी घटकों के साथ संबंधित नहीं होते हैं। इस प्रस्थापना को गणितीय पदों में निम्नवत् लिखा जा सकता है –

$$\rho_{y_t y_p} = \rho_{c_t c_p} = \rho_{y_t c_t} = 0 \qquad \ldots (6.16)$$

समीकरण (6.16) में हम पादाक्षरों से दर्शाए गए चरों के बीच सहसंबंध गुणांक के लिए प्रतीक ρ का उपयोग करते हैं। प्रथम दो गुणांक इन चरों की परिभाषा के अनुसार स्वयं व्याख्यात्मक हैं। वे केवल अस्थायी और स्थायी घटकों की परिभाषा का भाषांतरण एवं संपूरण कर रहे हैं। अंतिम गुणांक, जो अस्थायी आय और अस्थायी उपभोग के बीच सहसंबंध शून्य होने को दर्शाता है, समझना थोड़ा मुश्किल है।

फ्रीडमैन के अनुसार, उपभोग दीर्घावधिक सरोकारों से निर्धारित होता है। अस्थायी आय में कोई भी वृद्धि (माना, कोई अप्रत्याशित लाभ) मुख्य रूप से बचत में वृद्धि (परिसंपत्ति निर्माण अथवा पहले से संचित शेष राशि का उपयोग) की ओर ले जाती है, उपभोग में वृद्धि की ओर नहीं।

आखिरकार, व्यक्ति अपने उस अप्रत्याशित लाभ को उपभोग पर खर्च क्यों नहीं करता जो कि उसकी समकृत उपभोग–प्रवृत्ति रेखा से कहीं ऊपर है? वह संपूर्ण अप्रत्याशित लाभ को अपने जमा धन में ही जोड़ लेने की संभावना क्यों रखता है? इसके कुछ अंश का उपयोग उपभोग में क्यों नहीं किया जाता?

फ्रीडमैन ने अपनी अवधारणा के पक्ष में **तीन** तर्क प्रस्तुत किए हैं, जहाँ आय के अस्थायी घटक और उपभोग के अस्थायी घटक असंबद्ध नजर आते हैं, यथा –

(i) सामान्य प्रथा के विपरीत, फ्रीडमैन ने उपभोग व्यय के हिस्से के रूप में उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं पर खर्च को शामिल नहीं किया है। उसके अनुसार, उपभोग की परिभाषा सेवाओं के मूल्य के संदर्भ में होती है। उपभोग की इस परिभाषा ने उक्त अवधारणा को अनुभवजन्य आँकड़ों के प्रति कहीं अधिक व्यवहार्य बना दिया।

(ii) अस्थायी आय के साथ अप्रत्याशित लाभ यथातथ्य नहीं होता है। यदि अप्रत्याशित लाभ की आशा है तो इसे पहले से ही स्थायी आय की गणना में शामिल किया जा रहा है, सिवाय इसके कि उपभोक्ता इस अपेक्षित अप्रत्याशित लाभ के एवज में उधार लेने में असमर्थ था। उस स्थिति में अस्थायी उपभोग में कोई परिवर्तन नहीं होता। दूसरी ओर, यदि अप्रत्याशित लाभ अनपेक्षित है और यह उपभोक्ता के जीवन के अंतिम वर्ष में हो रहा है तो इससे अंतिम वर्ष के उपभोग व्यय में ही वृद्धि होगी, चालू वर्ष के उपभोग व्यय में नहीं।

(iii) यदि आय में अस्थायी वृद्धि अस्थायी उपभोग में वृद्धि कर सकती तो ऐसे उदाहरण भी हैं जहाँ यह अस्थायी उपभोग को कम कर सकती है (उदाहरण के लिए, लंबे समय तक काम करने के घंटे, किसी छोटे शहर या गाँव में तबादला हो जाना, आदि)। इस तरह के नकारात्मक और सकारात्मक सहसंबंध एक दूसरे को प्रतिसंतुलन करते हैं। फ्रीडमैन ने स्वीकार किया कि अस्थायी आय और अस्थायी उपभोग अवधारणा के बीच शून्य सहसंबंध जरूरी नहीं कि किसी सशक्त और कठोरतर सहसंबंध के रूप में नजर आए ही, जैसा कि प्रस्थापना में कहा गया है। इसका उद्देश्य उपभोक्ता व्यवहार से निष्पक्ष रूप से गहन सन्निकटता दर्शाना होता है।

ऊपर दिए गए तीसरे तर्क के अनुसार, चर, c_t अन्य चरों c_p और y_t के आसपास एक यादृच्छिक भिन्नता मात्र है। इसका अर्थ है कि आय स्तरों के अनुसार वर्गीकृत जनसंख्या के किसी भी यादृच्छिक नमूने के हिसाब से प्रत्येक आय वर्ग ' i ' के लिए औसत अस्थायी उपभोग शून्य ही होता है। इसका निहितार्थ है कि किसी भी समूह (या वर्ग) का औसत स्थायी उपभोग उस समूह (या वर्ग) के औसत मापे गए उपभोग के बराबर ही होता है।

$$\bar{c}_{ti} = 0 \qquad \ldots (6.17)$$

$$\bar{c}_i = \bar{c}_{pi} \qquad \ldots (6.18)$$

समीकरण (6.15) और (6.18) को एक साथ हम निम्नवत् लिख सकते हैं –

$$\bar{c}_i = \bar{c}_{pi} = \bar{k}\bar{y}_{pi} \qquad \ldots (6.19)$$

समीकरण (6.19) सभी आय वर्गों के लिए सत्य है, चाहे वे औसत आय वर्ग से ऊपर ($\bar{y}_{ti} > 0$ और $\bar{y}_i > \bar{y}_{pi}$) हों अथवा या औसत आय वर्ग से नीचे ($\bar{y}_{ti} < 0$ और $\bar{y}_i < \bar{y}_{pi}$) हों।

किसी भी औसत आय वर्ग से ऊपर के लिए –

(i) औसत मापित उपभोग $\bar{c}_i$ का मान पद $\bar{k}\bar{y}_{pi}$ के बराबर होता है;

(ii) उस वर्ग की औसत आय $\bar{y}_i$ के बराबर होती है; और

(iii) पद $\bar{y}_i$ का मान पद $\bar{y}_{pi}$ से अधिक अर्थात् $\bar{y}_i > \bar{y}_{pi}$ होता है।

अतएव, इसकी मापित औसत उपभोग प्रवृत्ति का मान अर्थात् $\frac{\bar{c}_i}{\bar{y}_i}$ पद $\bar{k}$ से कम होगा क्योंकि $\frac{\bar{y}_{p_i}}{\bar{y}_i} < 1$ होता है। इसी प्रकार, औसत से कम आय वर्ग के लिए मापित औसत उपभोग प्रवृत्ति का मान अर्थात् $\frac{\bar{c}_i}{\bar{y}_i}$ पद $\bar{k}$ से अधिक होगा।

आइए, अब इन परिणामों को चित्र 6.4 में दर्शाते हैं –

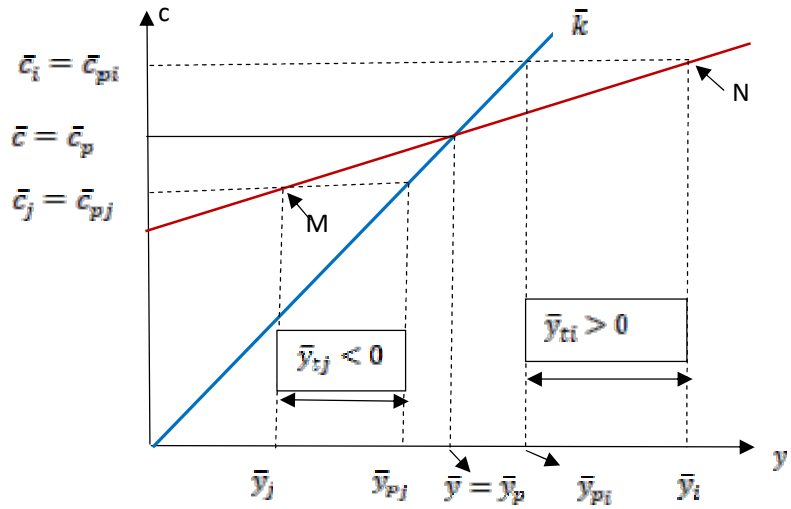

चित्र 6.4 फ्रीडमैन का प्रतिनिध्यात्मक उपभोग फलन

यह प्रतिनिध्यात्मक उपभोग फलन M और N जैसे बिंदुओं को जोड़कर बनाया गया है। यह फलन (लाल रेखा) स्वयं में अंतर्निहित स्थायी फलन (नीली रेखा) की तुलना में कम ढ़लान दर्शाता है। किसी भी प्रतिनिध्यात्मक बजट अध्ययन में हम सीमांत उपभोग प्रवृत्ति MPC $< APC$ देखे जाने की अपेक्षा करते हैं, बशर्ते फ्रीडमैन की स्थायी आय परिकल्पना सही हो।

चित्र 6.4 में दो आय वर्ग लिए गए हैं, यथा –

(i) $j^{वाँ}$ वर्ग, जिसकी औसत आय कुल जनसंख्या की औसत आय की तुलना में कम है, और

(ii) $i^{वाँ}$ वर्ग, जिसकी औसत आय कुल जनसंख्या की औसत आय से अधिक है।

तदनुसार, निम्न–औसत आय समूह की औसत अस्थायी आय ऋणात्मक है, जबकि उच्च–औसत आय समूह के लिए यह सकारात्मक है।

इसके अलावा, हमें आरेख में समीकरण (6.19) से ज्ञात होता है कि –

(i) $i^{वें}$ समूह के लिए $\bar{c}_i = \bar{c}_{pi} = \bar{k}\bar{y}_{pi}$ सिद्ध होता है, और

(ii) $j^{वें}$ समूह के लिए $\bar{c}_j = \bar{c}_{pj} = \bar{k}\bar{y}_{pj}$ सिद्ध होता है।

यह संबंध हमें बिंदु M देता है जो $\bar{c}_j$ और $\bar{y}_j$ को जोड़ता है, और बिंदु N देता है जो $\bar{c}_i$ और $\bar{y}_i$ को जोड़ता है। बिंदु M और N को जोड़कर हमें प्रतिनिध्यात्मक बजट अध्ययन उपभोग फलन प्राप्त होता है। यह फलन स्वयं में अंतर्निहित स्थायी फलन $(\bar{k})$ की अपेक्षा कम ढ़लान दर्शाता है। इसलिए, यदि हम फ्रीडमैन की स्थायी आय परिकल्पना को सही मानकर चलें तो प्रतिनिध्यात्मक बजट अध्ययन के लिए यह अपेक्षा की जाएगी कि सीमांत उपभोग प्रवृत्ति का मान औसत उपभोग प्रवृत्ति के मान से कम अर्थात् MPC $<$ APC हो।

दीर्घावधिक समय–शृंखला उपभोग फलन के बीच संबंध को स्पष्ट करने के लिए हमें व्यापार चक्र की कार्यप्रणाली को समझना होगा। किसी राष्ट्र का उत्पादन कालांतर में व्यापार चक्र के साथ बढ़ता तो है परंतु किसी स्थिर दर से नहीं। वह उत्कर्ष काल में अपने चरम पर पहुँच जाता है और चरम मंदी की अवधि में अपने निम्नतम बिंदु पर नजर

आता है। इस बीच में ही आते हैं – मंदी और पुनरुत्थान चरण। आय के इस उतार–चढ़ाव को स्थायी आय परिकल्पना की सहायता से समझाया जा सकता है।

किसी समयावधि में स्थायी आय की व्याख्या दीर्घावधिक प्रवृत्ति आय के रूप में की जा सकती है। किसी भी अवधि में यदि सकल घरेलू उत्पाद अथवा आय दीर्घावधिक स्थायी आय से कम हो तो हम कह सकते हैं कि उस अवधि में अस्थायी आय ऋणात्मक है और वर्ष में जब आय दीर्घावधिक प्रवृत्ति स्थायी आय से अधिक हो तो हम कहेंगे कि उस अवधि की अस्थायी आय सकारात्मक है। अतः, उत्कर्ष के वर्ष में अस्थायी आय सकारात्मक होती है और मंदी के वर्ष में अस्थायी आय नकारात्मक होती है।

चूँकि स्थायी आय परिकल्पना के अनुसार आय के अस्थायी घटक अस्थायी उपभोग और स्थायी उपभोग दोनों से संबंधित नहीं होते हैं, यह स्थायी उपभोग के आसपास एक यादृच्छिक घटक मात्र होता है और अस्थायी आय की सीमांत उपभोग प्रवृत्ति शून्य अथवा अति नगण्य होती है। यही कारण है कि परिवार अपनी दीर्घावधिक स्थायी उपभोग योजना में बदलाव नहीं करते हैं, भले ही वे अर्थव्यवस्था के उत्कर्ष काल अथवा कठिन दौर से गुजर रहे हों।

इस चक्रीय गति को चित्र 6.5 में फ्रीडमैन के समय–शृंखला उपभोग फलन आरेख के माध्यम से स्पष्ट किया गया है।

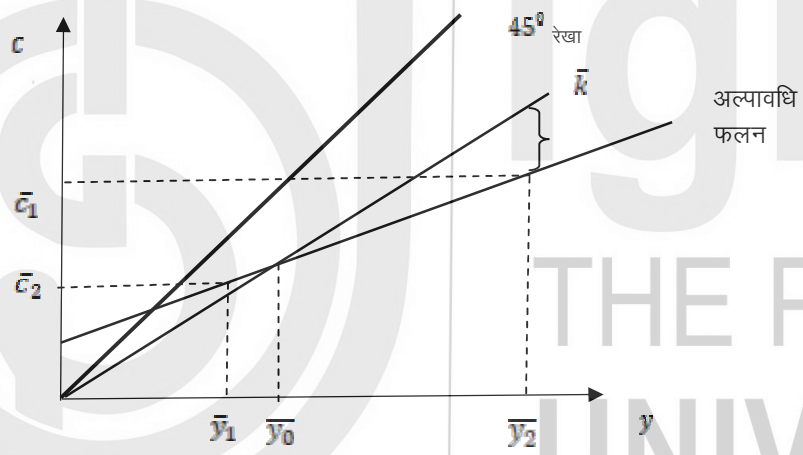

चित्र 6.5: फ्रीडमैन का समय–शृंखला उपभोग फलन

दीर्घावधिक समय–शृंखला उपभोग फलन ($\bar{k}$) में 45° रेखा की तुलना में कम ढ़लान है। इसलिए c/y अनुपात, जो कि दीर्घावधिक उपभोग फलन के साथ काफी स्थिर है, 1 से भी कम है। यह उपभोक्ताओं के उपभोग को समकृत करने संबंधी व्यवहार की व्याख्या करता है और यह भी दर्शाता है कि उपभोग में उतार–चढ़ाव आय में उतार–चढ़ाव की तुलना में कम है।

कालांतर में जब अर्थव्यवस्था और राष्ट्रीय औसत स्थायी आय प्रवृत्ति के साथ बढ़ती है, प्रतिनिध्यात्मक उपभोग फलन (देखें चित्र 6.4 में बिन्दुओं की रेखा) में बदलाव होता है। यहाँ चित्र 6.5 में वर्ष 1 उत्कर्ष की अवधि है। उस वर्ष देश की आय, $\overline{y_1}$ दीर्घावधिक प्रवृत्ति आय से अधिक रही। इसीलिए वर्ष 1 में जनसंख्या की औसत अस्थायी आय सकारात्मक है। दूसरी ओर, वर्ष 2 वह समयावधि है जब देश की आय, $\overline{y_2}$ प्रवृत्ति आय से कम रही। इसीलिए, वर्ष 2 में जनसंख्या की औसत अस्थायी आय ऋणात्मक है। इन दोनों ही वर्षों में देश की मापित औसत उपभोग न तो वर्ष 1 की सकारात्मक अस्थायी आय से और न ही वर्ष 2 की नकारात्मक अस्थायी आय से प्रभावित होता है।

दरअसल, यह उक्त दोनों ही वर्षों के वास्तव में मापित उपभोग से निर्धारित देश की स्थायी आय का $\bar{k}$ *अनुपात* है क्योंकि दोनों वर्षों का औसत अस्थायी उपभोग शून्य है, जिससे $\bar{c} = \bar{c}_p = \bar{k} \cdot \bar{y}_p$ होगा।

इस प्रकार, औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC), जो कि मापित आय से विभाजित मापित उपभोग के सिवा और कुछ नहीं है, की व्याख्या निम्नवत् की जा सकती है –

वर्ष 1 के लिए : $\text{APC} = \frac{\bar{c}_1}{\bar{y}_1} - \frac{\bar{c}_{p1}}{\bar{y}_1} - \frac{\bar{k}\bar{y}_{p1}}{\bar{y}_1}$; और $\bar{y}_{p_1} < \bar{y}_1$

तदनुसार, वर्ष 1 के लिए औसत उपभोग प्रवृत्ति का मान, जबकि y का मान प्रवृत्ति के मान से ऊपर है, $\bar{k}$ से कम ही होगा।

वर्ष 2 के लिए : $\text{APC} = \frac{\bar{c}_2}{\bar{y}_2} = \frac{\bar{c}_{p2}}{\bar{y}_2} = \frac{\bar{k}\bar{y}_{p2}}{\bar{y}_2}$; और $\bar{y}_{p_2} > \bar{y}_2$

तदनुसार, वर्ष 2 के लिए औसत उपभोग प्रवृत्ति का मान, जबकि y का मान प्रवृत्ति के मान से कम है, $\bar{k}$ से अधिक ही होगा।

इस प्रकार, अल्पावधिक उपभोग फलन का ढ़लान दीर्घावधिक उपभोग फलन की तुलना में कम होता है। इसके अलावा, अल्पावधिक चक्रीय उतार–चढ़ाव पर हम पाते हैं कि सीमांत उपभोग प्रवृत्ति का मान औसत उपभोग प्रवृत्ति के मान से कम अर्थात् MPC $< APC$ होता है, जबकि दीर्घावधिक अवलोकन के लिए आप पाएँगे कि APC = MPC अर्थात् ये दोनों मान बराबर होते हैं।

6.3.2 परिकल्पना के निहितार्थ

स्थायी आय परिकल्पना सरकार की राजकोषीय स्थिरीकरण नीतियों के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ रखती है। यह अस्थायी राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों (जैसे कर कटौती एवं हस्तांतरण आय) के माध्यम से अर्थव्यवस्था को मंदी के दौरान व्यापार आदि में घाटे से उबरने के लिए सरकार की क्षमता को सीधे चुनौती देता है। इस प्रक्रिया में यह मॉडल अस्थायी केन्जियन माँग प्रबंधन तकनीक की विफलता की व्याख्या करता है।

किसी भी सरल केन्जियन प्राधार में सीमांत उपभोग प्रवृत्ति स्थिर रहती है। इसीलिए कोई भी कर–कटौती नीति अपने गुणक प्रभाव के माध्यम से उपभोग की माँग पर बड़ा प्रोत्साहक प्रभाव डाल सकती है। स्थायी आय परिकल्पना, बहरहाल, इंगित करती है कि करों में कोई भी अप्रत्याशित अस्थायी कटौती केवल उपभोक्ताओं की प्रयोज्य आय के अस्थायी घटक को बढ़ाएगी। चूँकि आय में अस्थायी वृद्धि का उपभोग माँग पर कोई महत्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है, इससे उपभोक्ताओं की बचत में वृद्धि होगी। इस प्रकार, इस स्वभाव की राजकोषीय नीति विफल होने की प्रबल संभावना होती है।

स्थायी आय परिकल्पना की एक सशक्त व्याख्या यह पहले से ही बतलाकर चलती है कि सामाजिक सुरक्षा उपाय (जैसे बेरोजगारी भत्ता) और कर–कटौती नीति समतुल्य परिणाम देने वाले साबित होंगे। इन उपायों से अस्थायी आय होती है और इस कारण ये परिवारों के उपभोग व्यय को प्रभावित नहीं करते हैं। हालाँकि, यह देखा गया कि अक्टूबर 2013 में संयुक्त राज्य अमेरिका की संघीय सरकार द्वारा 16–दिवसीय कामबंदी की वजह से विनियोग विधेयक के रुकने के परिणामस्वरूप 66 लाख कार्य–दिवसों का नुकसान हुआ और देश में सरकारी कर्मचारियों के बीच कुल उपभोग व्यय में भी काफी गिरावट दर्ज की गई।

यद्यपि इस कामबंदी का असर उन सरकारी कर्मचारियों की जीवन भर की अपेक्षित आय पर नहीं पड़ना चाहिए था (क्योंकि वे जानते थे कि काम के नुकसान के लिए उन्हें बाद में भुगतान कर दिया जाएगा), उनके उपभोग व्यय में गिरावट आई।

अधिकांश श्रमिकों ने स्थायी आय परिकल्पना के विपरीत अपने खर्च में कटौती करके अल्पावधिक आय आघात पर प्रतिक्रिया दी।

स्थायी आय परिकल्पना से सहज और भूलवश जो निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं, उनमें से एक अधिकांश अर्थव्यवस्थाओं में चिरकालिक रूप से बढ़ती असमानता है। यह सिद्धांत बतलाता है कि प्रतिनिध्यात्मक बजट अध्ययनों में उच्च–आय समूहों की तुलना में निम्न–आय समूह औसत नकारात्मक अस्थायी आय दर्शाते हैं। समकृत उपभोग कायम रखने के लिए स्थायी उपभोग स्थायी आय पर निर्भर करता है। इसी कारण निम्न–आय समूहों में नकारात्मक बचत देखी जाती है जबकि उच्च–आय समूहों में सकारात्मक बचत। यह कालांतर में आय असमानता को बढ़ाता है।

इस संदर्भ में फ्रीडमैन ने स्पष्ट किया कि यदि आय की परिभाषा मापित आय के अनुसार ही हो तो शायद यह निहितार्थ सत्य हो सकता है। उसके अनुसार, बहरहाल, यदि आय की परिभाषा को नियमनिष्ठतः स्थायी आय के रूप में लिया जाता है तो स्थायी आय परिकल्पना आय की असमानता के चिरकालिक व्यवहार पर कोई सबूत नहीं दे पाती है। इसके अलावा, मापित आय को धन का एक निकृष्ट सूचकांक माना जाता है।

6.3.3 परिकल्पना की कमियाँ

फ्रीडमैन की स्थायी आय परिकल्पना की मुख्य रूप से निम्नलिखित आधारों पर आलोचना की जाती है –

- यह मॉडल आय और उपभोग चरों को स्थायी और अस्थायी घटकों में विघटित करता है। यद्यपि सैद्धांतिक रूप से इसके घटकों को आनुभविक कार्य के लिए नहीं लिया जा सकता।
- स्थायी आय के अंतर्निहित अनुमान में संपत्ति आय की अवधारणा को ध्यान में रखा जाता है। संपत्ति की आय का महत्व अथवा उपभोग व्यवहार पर संपत्ति बाजार में उतार–चढ़ाव का प्रभाव इस मॉडल में स्पष्ट रूप से नहीं बताया गया है।
- तीसरे, और स्थायी आय परिकल्पना की संभवतः सर्वाधिक विवादास्पद अवधारणा अर्थात् अस्थायी आय और अस्थायी उपभोग के बीच कोई संबंध नहीं होता, का समर्थन करने के लिए फ्रीडमैन ने उपभोग व्यय के हिस्से के रूप में उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं पर खर्च को ध्यान में नहीं रखा।
- अनेक अर्थशास्त्री फरीडमैन के इस विचार पर आपत्ति जताते हैं कि वह अस्थायी आय से उपभोग करने की सीमांत प्रवृत्ति शून्य मानते हैं। जबकि अनुभवजन्य रूप से कुछ प्रमाण यह दर्शाते हैं कि अस्थायी आय से उपभोग करने की सीमांत प्रवृत्ति शून्य से अधिक होती है। किसी भी कम आय वाले गरीब व्यक्ति के लिए अप्रत्याशित अनपेक्षित लाभ से उपभोग करने की सीमांत प्रवृत्ति निश्चित रूप से सकारात्मक होगी। यहाँ तक कि बाध्यकारी उधार बाध्यता के मामले में भी ऐसा ही होता है।
- कुछ अर्थशास्त्री आय वर्ग की परवाह किए बिना निरंतर औसत उपभोग प्रवृत्ति संबंधी फ्रीडमैन के विचार का विरोध करते हैं। उनके अनुसार, अमीर लोगों की तुलना में गरीब लोग अपनी स्थायी आय का अधिक हिस्सा खर्च करने के लिए

अधिक दबाव महसूस करते हैं। स्थायी आय से औसत उपभोग प्रवृत्ति का मान बढ़ती आय के साथ घटना चाहिए।

बोध प्रश्न 2

1. मान लीजिए कि एक सॉफ्टवेयर इंजीनियर पिछले तीन महीनों से कोविड–19 लॉकडाउन अवधि के दौरान घर से काम कर रहा है और कंपनी ने उसे ₹ 10,000 का इनाम दिया है। स्थायी आय परिकल्पना के अनुसार, क्या वह इस बोनस का अधिकांश हिस्सा खर्च करेगा यदि –

   (a) वह जानता हो कि उसे हर 3 महीने में बोनस की यह राशि प्राप्त होगी,

   और

   (b) वह जानता हो कि यह मात्र एक बार का बोनस है?

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. कारण बताएँ कि अस्थायी आय और अस्थायी उपभोग के बीच कोई संबंध क्यों नहीं होता।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

3. मान लीजिए कि वर्ष 0 के अंत तक सरकार एक संतुलित बजट चला रही थी, जिस दौरान $T = G = 0$ दर्ज किया गया। वर्ष 1 में सरकार ने करों में 1 तक की कटौती करने का निर्णय लिया। इस घाटे को सरकार ऋण के माध्यम से वित्तपोषित कर रही है, जिसका निर्णय सरकार ने वर्ष 2 में चुकाने के लिए किया है। यह भी मान लीजिए कि सरकार को अपने व्यय पथ को अपरिवर्तित रखना है। विश्लेषण करें कि यह कर–कटौती नीति वास्तविक ब्याज दर 0.05 रहने पर उपभोक्ता के उपभोग और बचत को कैसे प्रभावित करेगी।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

4. उपर्युक्त समस्या में मान लीजिए कि वर्ष 1 के अंत में उपभोक्ता की मृत्यु होनी है और उसे अपनी आने वाली पीढ़ी की परवाह नहीं है। उक्त कर कटौती से उसका उपभोग कैसे प्रभावित होगा?

.....

.....

.....

.....

.....

6.4 सार–संक्षेप

एंडो और मोदिग्लिआनी ने अपने 'लाइफ साइकिल हाइपोथिसिस' में इस बात पर प्रकाश डाला कि यद्यपि व्यक्तियों की आय उनके जीवनकाल में काफी भिन्न–भिन्न होती है, वे जीवनकाल में एक समकृत उपभोग पथ बनाए रखते हैं। उपभोक्ता अपने उपभोग पथ को समकृत करने के लिए उधार और बचत का उपयोग करते हैं। नीति–निर्माताओं के लिए बचत दर में अंतर्देशीय अंतर और धन की वृद्धि पर उसके प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए इस मॉडल का सशक्त निहितार्थ था।

फ्रीडमैन ने स्थायी आय अस्थायी आय की अवधारणा को पेश करके व्यक्ति की आजीवन आय में भिन्नता को समझाया। उसकी स्थायी आय परिकल्पना ने बताया कि आय और उपभोग के अस्थायी घटकों के बीच कोई संबंध नहीं होता। उपभोग मुख्य रूप से स्थायी आय पर निर्भर करता है। इस मॉडल ने अल्पावधिक राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों के केन्जियन नीति–निर्धारण की प्रभावशीलता पर सवाल उठाया।

6.5 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) उपभोक्ता की आजीवन आय = कार्य वर्ष × वार्षिक श्रम आय
= (65 – 20) × 30,000 = 1,350,000.
वार्षिक औसत उपभोग व्यय = आजीवन आय / जीवनकाल
= 1,350,000 / (80–20) = 22500
आपको निम्नलिखित विधि से भी वही परिणाम प्राप्त होंगे –

$$\frac{65-20}{80-20} \times 30000 = 22500$$

$$\text{MPC} = \frac{65-20}{80-20} = 0.75$$

2) उसका वार्षिक उपभोग व्यय = (30 + 60 + 90 + 0) / 4 = 45

अतः प्रथम अवधि में बचत = (30 – 45) = – 15

दूसरी अवधि में बचत = (60 – 45 – 15) = 0 (उसने पहली अवधि की निर्बचत को चुकता कर दिया)

तीसरी अवधि में बचत = (90 – 45) = 45

चौथी अवधि में बचत = $(0 - 45) = -45$ (उसने अपनी तीसरी अवधि की बचत का उपयोग किया) पहली अवधि में व्यक्ति ₹ 15 की निर्बचत (उधार) करता है।

पहली अवधि के अंत में उसे ₹ 15 की संपत्ति प्राप्त हुई, वह उससे अपना कर्ज चुकाएगा। वह फिर से अपने सम उपभोग प्रवाह की पुनर्गणना करेगा

$= (60 + 90 + 0) / 3 =$ ₹ 50

पहले उसका उपभोग व्यय था = ₹ 45

दूसरी अवधि के बाद उपभोग व्यय में परिवर्तन

$= (50 - 45) = 5$

बोध प्रश्न 2

1) पहले मामले में व्यक्ति को पता था कि उसे हर 3 महीने में बोनस मिलने वाला है, इसलिए यह उसकी जीवन भर की आय में स्थायी वृद्धि है। स्थायी आय परिकल्पना के अनुसार, उपभोग स्थायी आय पर निर्भर करता है। अतः, जैसे–जैसे स्थायी आय बढ़ेगी, उपभोक्ता इस बोनस आय को अधिकाधिक खर्च करेगा।

   दूसरे मामले में, उपभोक्ता जानता था कि बोनस केवल एक बार था, इसलिए यह अस्थायी है। स्थायी आय परिकल्पना के अनुसार, अस्थायी उपभोग और अस्थायी आय के बीच संबंध नगण्य या शून्य होता है। अतः, इस मामले में उपभोक्ता अपनी बोनस राशि खर्च नहीं करेगा।

2) फ्रीडमैन ने अस्थायी आय और अस्थायी खपत के बीच कोई संबंध न होने के तीन कारण बताए हैं। पाठांश 6.4.1 का अध्ययन करें और उत्तर दें।

3) वर्ष 1 में चूँकि सरकारी व्यय पथ पूर्ववत रहता है, $G_1 = 0$ और वर्ष 1 में कर कटौती भी होती है, इसलिए $T_1 = -1$ होगा। तदनुसार, वर्ष 1 में सरकारी घाटे का आकार $= (G_1 - T_1) = 1$ होगा। अतः, वर्ष 1 में ऋण की राशि, $B_1 = 1$ (क्योंकि पिछले वर्ष 0 से कोई संचित ऋण नहीं था)।

   वर्ष 2 में सरकारी ऋण की राशि $= B_2 = B_1 \times (1 + r)$

   $= 1 \times (1 + 0.05) = 1.05$

   यदि सरकार को उक्त ऋण वर्ष 2 में चुकाया जाना है तो सरकार को ऋण B_2 की राशि का प्राथमिक अधिशेष बनाना होगा। यदि सरकार को भी उसी सरकारी व्यय पथ (अर्थात् $G_2 = 0$) को बनाए रखने की आवश्यकता लगती हो तो इस प्राथमिक अधिशेष को बनाने का एकमात्र तरीका वर्ष 2 में 1.05 तक की करवृद्धि करना होगा।

   इसे पूर्ण दूरदर्शिता के साथ जानते हुए उपभोक्ताओं को पता है कि वर्ष 1 में 1 तक की कर कटौती वर्ष 2 में करों में 1.05 तक की वृद्धि के बराबर होगी। अतः वर्ष 1 में, यद्यपि कर कटौती के कारण उपभोक्ताओं की प्रयोज्य आय में वृद्धि होती है, उपभोग की माँग यथावत रहेगी और प्रयोज्य आय में पूरी वृद्धि बचत के लिए जाएगी। वर्ष 2 में वर्ष 1 की बचाई गई राशि और उस पर अर्जित ब्याज की दर का उपयोग वर्ष 2 में बढ़े हुए कर के भुगतान के लिए किया जाएगा, इसलिए, वर्ष 2 में, उपभोग की माँग और बचत यथावत देखी जाएँगी।

4) उपभोक्ता के वर्ष 1 के अंत में मरने का अनुमान है और उसे भावी पीढ़ी की परवाह नहीं है। कर कटौती के कारण उपभोक्ता की प्रयोज्य आय 1 अवधि में बढ़ जाती है। वह इस बढ़ी हुई प्रयोज्य आय का उपयोग बचत के बजाय अतिरिक्त उपभोग व्यय पर करेगा क्योंकि भविष्य में उच्च करों का भुगतान आने वाली पीढ़ियों द्वारा किया जाएगा।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 निवेश फलन*

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 व्यापार स्थिर निवेश

- 7.2.1 निवेश का नियोक्लासिकल मॉडल और इष्टतम पूँजी भंडार
- 7.2.2 पूँजी भंडार की समायोजन गति
- 7.2.3 शेयर बाजार और टोबिन का क्यू–सिद्धांत

7.3 आवासीय निवेश

- 7.3.1 सैद्धांतिक संरचना
- 7.3.2 चित्रात्मक विश्लेषण
- 7.3.3 मॉडल के निहितार्थ

7.4 माल–सूची निवेश

- 7.4.1 माल–सूची रखने का उद्देश्य
- 7.4.2 माल–सूची, वास्तविक ब्याज दर और व्यापार चक्र

7.5 सार–संक्षेप

7.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

7.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि –

- निवेश को प्रेरित करने वाले कारकों की पहचान कर सकें;
- निवेश की दर पर मौद्रिक नीति और राजकोषीय नीति के प्रभाव की व्याख्या कर सकें;
- वास्तविक पूँजी भंडार के इष्टतम पूँजी भंडार में समायोजन की गति का वर्णन कर सकें;
- निवेश में उतार–चढ़ाव और शेयर बाजार में उतार–चढ़ाव के बीच संबंध को पहचान सकें;
- समझा सकें कि गृह ऋण और कर नीतियाँ आवासीय परियोजनाओं पर निवेश के घर खरीदारों के निर्णय को कैसे प्रभावित करते हैं; तथा
- उत्पादन के एक भाग को माल–सूची के रूप में अलग रखने के पीछे के उद्देश्यों की पहचान कर सकें।

7.1 प्रस्तावना

पिछली दो इकाइयों में हमने किसी परिवार के उपभोग विकल्पों का विश्लेषण किया। अब इस इकाई में हम निवेश निर्णय के सैद्धांतिक पहलुओं का विश्लेषण करेंगे। जैसा कि आप जानते हैं, निजी निवेश दीर्घावधिक विकास के साथ–साथ व्यापार में अल्पावधिक उतार–चढ़ाव के संदर्भ में भी कुल माँग का एक महत्वपूर्ण घटक होता है।

* सुश्री वैशाखी मंडल, सहायक प्राध्यापक, इंद्रप्रस्थ महिला कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

विकास की दृष्टि से उपभोग में समाज के संसाधनों का आवंटन और विभिन्न प्रकार का निवेश (भौतिक पूँजी, वित्तीय पूँजी, मानव पूँजी और अनुसंधान एवं विकास के रूप में) दोनों ही किसी भी अर्थव्यवस्था के सकल घरेलू उत्पाद के आकार निर्धारण और स्थिरावस्था संवृद्धि के लिए बहुत महत्वपूर्ण होते हैं।

इस इकाई में हम तीन प्रकार के निवेश पर चर्चा करेंगे, यथा –

(i) व्यापार स्थिर निवेश,
(ii) आवासीय निवेश, और
(iii) माल–सूची निवेश।

निवेश व्यय कुल माँग का सबसे अस्थिर घटक होता है और तदनुसार आर्थिक गतिविधियों के उतार–चढ़ाव का एक प्रमुख स्रोत भी, जो कि प्रायः व्यापार चक्र की ओर ले जाता है।

निवेश के महत्व को उस वित्त बाजार के माध्यम से भी उजागर किया जा सकता है जो अर्थव्यवस्था को प्रभावित करता है। इस इकाई में हम निवेश और वित्त बाजार के बीच दोतरफा संबंधों की जाँच भी करेंगे।

7.2 व्यापार स्थिर निवेश

व्यापार स्थिर निवेश उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लिए फर्मों द्वारा किए जाने वाले व्यय को निरूपित करता है। परंपरागत रूप से इसे निम्नवत् विघटित किया जाता है –

(i) उपकरण (कंप्यूटर, मशीन आदि),
(ii) प्राधार (भूमि, संयंत्र, गोदाम आदि), और
(iii) बौद्धिक संपदा (सॉफ्टवेयर, अनुसंधान एवं विकास, आदि)

निवेश के तीन महत्वपूर्ण सिद्धांत बताए जाते हैं, यथा –

(i) नियोक्लासिकल सिद्धांत,
(ii) त्वरक सिद्धांत, और
(iii) क्यू–सिद्धांत।

प्रथम, नियोक्लासिकल अथवा नवशास्त्रीय सिद्धांत, जो कि अधिकांशतः डेल डब्ल्यू. जोर्गेनसन द्वारा विकसित किया गया था, किसी भी अर्थव्यवस्था में इष्टतम पूँजी भंडार के माध्यम से उत्पादन और कीमतों के निर्धारण में मदद करता है।

द्वितीय, त्वरक सिद्धांत पूँजी भंडार के स्तर में समायोजन की प्रक्रिया का विश्लेषण करता है।

तृतीय, जेम्स टोबिन का क्यू–सिद्धांत समायोजन लागत को शामिल करने के लिए नियोक्लासिकल सिद्धांत का विस्तार करता है। इस सिद्धांत के अनुसार फर्में उस निवेश स्तर का चयन करती हैं जहाँ किसी फर्म का अपेक्षित वर्तमान मूल्य अधिकतम हो।

आगे हम इन सिद्धांतों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

7.2.1 निवेश का नियोक्लासिकल मॉडल और इष्टतम पूँजी भंडार

निवेश का नियोक्लासिकल मॉडल एक भली भाँति काम करने वाली और कुशलता से समन्वय करने वाली बाजार प्रणाली की कल्पना करता है। डेल डब्ल्यू. जोर्गेन्सन ने नियोक्लासिकल निवेश सिद्धांत के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। यह सिद्धांत इस अवधारणा पर आधारित है कि फर्में अधिकतम लाभ प्राप्त करती हैं और पूँजी भंडार के इष्टतम स्तर तक पहुँचने के लिए लागत–लाभ विश्लेषण का उपयोग करती हैं।

हमारे मॉडल में एक विशिष्ट लाभ अधिकतम करने वाली फर्म अपने उत्पादन Y का उत्पादन करने के लिए श्रम (L) और पूँजी (K) को नियोजित करती है। उत्पादन कार्य इस संबंध को निम्नवत् निर्दिष्ट करता है –

$$Y = F(L, K) \qquad \ldots (7.1)$$

यह एक विशिष्ट नियोक्लासिकल उत्पादन फलन है जहाँ यह उत्पादन के कारक की घटती सीमांत उत्पादकता को प्रदर्शित करता है।

हम यह मानकर चलते हैं कि माल बाजार और आगत बाजार दोनों में ही पूर्ण प्रतिस्पर्धा है ताकि कोई भी फर्म अपने उत्पाद को दी गई कीमत P पर बेच सके। यह फर्म चालू मजदूरी दर w पर श्रमिक काम पर लगाती है।

चलिए, मान लेते हैं कि P_K वह आपूर्ति कीमत है जिस पर फर्म द्वारा पूँजीगत वस्तु की एक इकाई खरीदी जा सकती है।

अब यह तय करने के लिए कि फर्म कितनी पूँजी का उपयोग करेगी, व्यष्टि अर्थशास्त्र से मूल इष्टतमीकरण सिद्धांत को याद करें।

फर्म अधिकतम लाभ के सिद्धांत के अनुसार कार्य करेगी, यथा –

$$Max\ \Pi = (\text{ कुल राजस्व} - \text{कुल लागत }) = [\,P \cdot F(L, K) - (\text{श्रम लागत} + \text{कुल पूँजी लागत})\,] \qquad \ldots (7.2)$$

कुल श्रम लागत = w.L

कुल पूँजी लागत = पूँजी की एक इकाई की उपयोगकर्ता लागत × K

फर्म लाभ को अधिकतम करने के सिद्धांत के अनुसार काम करेगी। अतः हमें प्रति इकाई पूँजी की इस **उपयोगकर्ता लागत** को परिभाषित करने की आवश्यकता है। इसके तीन घटक होते हैं –

1. फर्म बाजार से ब्याज दर (i) पर अथवा अपने स्वयं के संसाधनों से उधार लेकर पूँजीगत माल खरीद सकती है। यदि पूँजी उधार लेकर खरीदी जाती है तो पूँजी की एक इकाई की उधार लागत $P_K.i$ होगी। यदि फर्म ने अपने ही संसाधनों के उपयोग से पूँजी खरीदी है तो वह इस पैसे को इसके बदले उधार दे सकती थी और $P_K.i$ अर्जित कर सकती थी। दूसरी स्थिति में यह पूँजी की **अवसर लागत** कहलाती है। वित्तपोषण के दोनों ही तरीकों में $P_K.i$ पूँजी की ब्याज लागत होगी।

2. आप जानते हैं कि पूँजीगत वस्तुएँ टिकाऊ होती हैं, लेकिन वे मूल्यह्रास (यथा, टूट–फूट, और अप्रचलन भी) के अधीन होती हैं। मान लीजिए δ मूल्यह्रास की दर है। अतएव, मूल्यह्रास की मौद्रिक लागत $P_K.\delta$ होगी।

3. यदि पूँजीगत वस्तुओं की कीमत, P_K घटती है, तो पूँजी का मूल्य कम हो जाता है। इस हानि की लागत $-\Delta P_K$ होती है, जहाँ प्रतीक Δ परिवर्तन को इंगित करता है और ऋण चिह्न (–) हमारी लागत के मान को दर्शाता है, लाभ को नहीं।

इस प्रकार, फर्म द्वारा खरीदी गई पूँजी की एक इकाई की उपयोगकर्ता लागत (मात्रिक पदों में) होगी –

$$= P_K.i + \delta.P_K - \Delta P_K = P_K\left(i + \delta - \left(\frac{\Delta P_K}{P_K}\right)\right) \qquad \ldots (7.3)$$

इसे सरल बनाने के लिए, चलिए, मान लेते हैं कि पूँजीगत वस्तुओं की कीमत में वृद्धि अन्य वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि के ही समान है।

तब, $$\frac{\Delta P_K}{P_K} = \text{मुद्रास्फीति दर} = \pi.$$

इस मान को समीकरण (7.2) में प्रतिस्थापित करने पर हमें पूँजी की एक इकाई की उपयोगकर्ता लागत प्राप्त होती है, यथा –

$$= P_K(i + \delta - \pi)$$

चूँकि नाममात्र ब्याज दर (i) - मुद्रास्फीति दर (π) = वास्तविक ब्याज दर (r), हमें निम्नलिखित समीकरण प्राप्त होते हैं –

पूँजी की उपयोगकर्ता लागत $= P_K(r + \delta)$ … (7.4)

और,

कुल पूँजी लागत $= P_K(r + \delta) \times K$ … (7.5)

फर्म की इष्टतमीकरण निर्मेय (समीकरण 7.2) में पूँजीगत लागत (समीकरण 7.5) का मान रखने पर, हमें यह समीकरण प्राप्त होता है –

$$\text{Max } \Pi = [P \cdot \text{F (L, K)} - w.L - P_K(r + \delta) \times K] \quad \ldots (7.6)$$

उक्त फर्म क्रमशः श्रम (L) और पूँजी (K) के संबंध में अपने उद्देश्य फलन (समीकरण 7. 6) को अधिकतम करेगी। पूँजी के संदर्भ में प्रथम कोटि शर्त निम्नवत् लिखी जाती है –

$$\frac{\partial \Pi}{\partial K} = PF_k - P_K(r + \delta) = 0$$

$$\Rightarrow P.MP_k = P_K(r + \delta)$$

[**नोट** : $F_k = MP_k =$ पूँजी का सीमांत उत्पाद]

$\Rightarrow$ पूँजी के सीमांत उत्पाद का मूल्य = $P_K(r + \delta)$ … (7.7)

समीकरण (7.7) पूँजी के लिहाज से फर्म के लाभ अधिकतमकरण की स्थिति है। इसका अर्थ है कि पूँजी की एक अतिरिक्त इकाई की लागत $P_K(r + \delta)$ होगी और पूँजी की अतिरिक्त इकाई MP_k इकाइयों में वृद्धि करेगी, जिससे राजस्व $P.MP_k$ उत्पन्न होता है।

अतः पूँजी निवेश की मात्रा तब तक बढ़ाई जाएगी जब तक कि अतिरिक्त राजस्व (लाभ) पूँजी भंडार जोड़ने के लिए अतिरिक्त उपगत लागत से अधिक न हो जाए है और इसका विपरीत भी सत्य है। इष्टतम पूँजी भंडार उस बिंदु पर निर्धारित किया जाएगा जहाँ अतिरिक्त राजस्व अतिरिक्त लागत के बराबर हो।

समीकरण (7.7) को इस प्रकार लिखा जा सकता है –

$$MP_k = \frac{P_K}{P}.(r + \delta) = rc \quad \ldots (7.8)$$

यहाँ, पद $\frac{P_K}{P}.(r + \delta) =$ *पूँजी की वास्तविक किराया लागत* $= rc$

यदि पूँजी का सीमांत उत्पाद पूँजी की वास्तविक किराया लागत से अधिक होता है तो फर्म को अपने पूँजी भंडार में वृद्धि लाभदायक लगती है, $\Delta K > 0$ होगा। चर K के लिए समीकरण (7.8) को हल करने से पूँजी K^* का इष्टतम अथवा वांछित भंडार प्राप्त होगा।

वांछित पूँजी भंडार, K^* पूँजी की किराया लागत rc और उत्पादन के स्तर के बीच सामान्य संबंध द्वारा निम्नवत् दर्शाया जाता है –

$$K^* = f(rc, Y) \qquad \ldots (7.9)$$

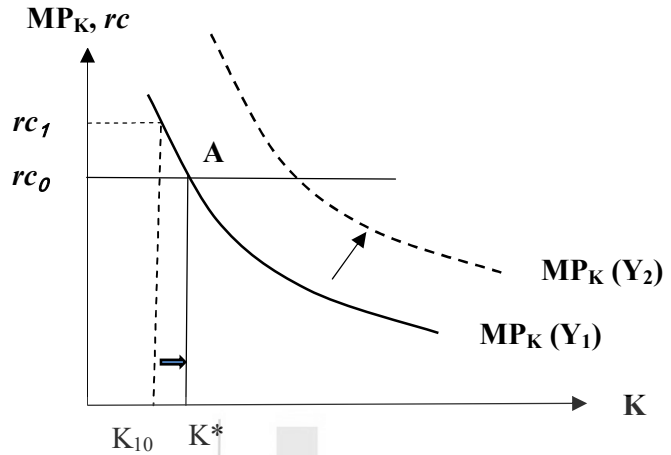

चित्रः 7.1: पूँजी का इष्टतम स्टॉक

इष्टतम पूँजी स्टॉक K* पूँजी का वह स्तर है जिस पर MP_K rc_0 के बराबर है। यहाँ MP_K मूल्य–सूची को उत्पादन Y_1 के किसी दिए गए स्तर के लिए तैयार किया गया है। उत्पादन में वृद्धि MP_K मूल्य–सूची को ऊपर की ओर दाईं तरफ खिसका देती है।

समीकरण (7.9) में किराया लागत में वृद्धि से पूँजी भंडार का इष्टतम अथवा वांछित स्तर घट जाता है। इसके अलावा, सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि से पूँजी भंडार का इष्टतम स्तर बढ़ जाता है।

हमने उक्त संबंध को चित्र 7.1 में दर्शाया है। यहाँ जब किराया लागत rc_0 है तो वांछित पूँजी भंडार K* है। किराया लागत में rc_1 तक की कोई भी वृद्धि वांछित पूँजी भंडार को घटाकर K_1 पर ले आती है। उत्पादन में Y_1 से लेकर Y_2 तक की कोई भी वृद्धि MPK वक्र को दाईं ओर ऊपर खिसका देगी। परिणामतः, संतुलन पूँजी भंडार में वृद्धि होगी।

इस प्रकार, व्यापार स्थिर निवेश पूँजी के सीमांत उत्पाद, ब्याज की वास्तविक दर और मूल्यह्रास दर पर निर्भर करता है। वास्तविक ब्याज दर में कमी से पूँजी की लागत कम हो जाती है। पूँजी का स्वामी होने से लाभ बढ़ता है और अधिक संचय करने के लिए प्रोत्साहन बढ़ जाता है (अर्थात् निवेश में वृद्धि) और इसका विपरीत भी सत्य है। अतएव, समीकरण (7.8) ब्याज दर और निवेश के बीच व्युत्क्रम संबंध को दर्शाता है।

7.2.2. पूँजी भंडार की समायोजन गति

यदि वास्तविक पूँजी भंडार किसी भी समयबिंदु पर इष्टतम पूँजी भंडार से भिन्न होता है तो फर्म किस गति से अपने पूँजी भंडार को इष्टतम स्तर की ओर समायोजित करने के बारे में सोचेगी? आइए, जानें।

इस समायोजन गति का पता लगाने में हमारी मदद करता है – **लोचदार त्वरक मॉडल** (जिसे *क्रमिक त्वरक मॉडल* भी कहा जाता है)। चलिए, मान लेते हैं कि अवधि (t – 1) के अंत में वास्तविक पूँजी भंडार K_{t-1} है और इष्टतम पूँजी भंडार K^* है।

फर्म प्रत्येक अवधि में इष्टतम और वास्तविक पूँजी भंडार के बीच के अंतर के एक अंश, λ, को बंद करने की योजना बना रही है।

अतएव, $t^{\text{वीं}}$ अवधि का पूँजी भंडार, K_t निम्नवत् नजर आएगा –

$$K_t = K_{t-1} + \lambda(K^* - K_{t-1}) \qquad \ldots (7.10)$$

उक्त $t^{\text{वीं}}$ अवधि के निवल निवेश को निम्नवत् लिखा जा सकता है –

$$I_t = K_t - K_{t-1} = \lambda(K^* - K_{t-1}) \qquad \ldots (7.11)$$

इसी प्रकार, $(t+1)^{\text{वीं}}$ अवधि के निवल निवेश को निम्नवत् लिखा जाएगा –

$$I_{t+1} = K_{t+1} - K_t = \lambda(1-\lambda)(K^* - K_{t-1}) \qquad \ldots (7.12)$$

इस प्रकार, $t^{\text{वीं}}$ अवधि में K_{t-1} और K^* के बीच प्रारंभिक अंतर के λ अंश का निवेश किया जा रहा है। साथ ही, $(t+1)^{\text{वीं}}$ अवधि में निवेश की राशि में मूल अंतर का λ(1 – λ) अंश बनाया जा रहा है। आप देखेंगे कि चूँकि λ एक अंश है, λ(1 – λ) चर λ के मान से कम है। यही कारण है कि प्रत्येक अनुवर्ती अवधि में वास्तविक पूँजी भंडार और इष्टतम पूँजी भंडार के बीच के अंतर को पाटने के लिए निवेश की मात्रा लघु से लघुतर होती जा रही है। अतएव, अब समीकरण निम्नवत् दिखाई देगा –

$$< \cdots < I_{t+1} = K_{t+1} - K_t < I_t = K_t - K_{t-1} < \cdots <$$

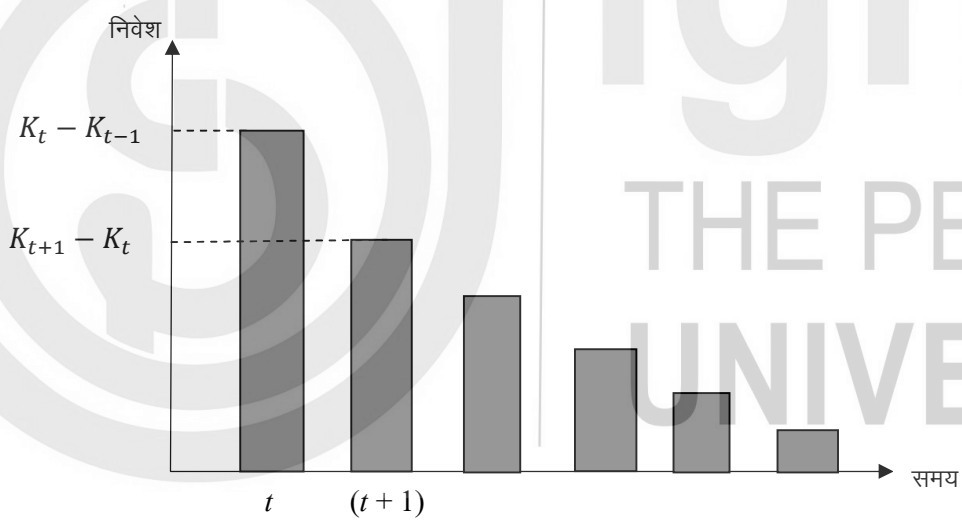

चित्र 7.2: लोचदार त्वरक (accelerator) मॉडल में निवेश की गति

निवेश तब तक जारी रहता है जब तक वास्तविक पूँजी भंडार पूँजी के इष्टतम स्तर तक नहीं पहुँच जाता। चर λ का मान जितना अधिक होगा, समायोजन की गति उतनी ही तेज होगी।

ऊपर दिया गया चित्र 7.2 निवेश की मात्रा लघु से लघुतर होने अर्थात् समायोजन की गति को दर्शाता है। आप देखेंगे कि किया गया निवेश वास्तविक स्तर और वांछित स्तर के के अंतर को खत्म करने के लिए समय के साथ घटता जाता है।

7.2.3. शेयर बाजार और टोबिन का क्यू–सिद्धांत

अब तक हम यह मानकर चले हैं कि किसी भी फर्म के लिए धन के स्रोत के रूप में या तो उधार ली गई नकदी होती हैं या फिर स्वयं के संसाधन। किसी भी फर्म के लिए धन का तीसरा स्रोत, बहरहाल, किसी फर्म के शेयर अथवा इक्विटीज हो सकती हैं।

कोई भी फर्म शेयर बाजार में नई इक्विटी जारी कर सकती है और धन जुटा सकती है। इक्विटी एक ऐसा वित्तीय साधन है जिसका शेयर बाजार में कारोबार किया जा सकता है।

यही विधि है जिससे निवेश में और शेयर बाजार में उतार–चढ़ावों के बीच की कड़ी स्थापित होती है। जेम्स टोबिन ने सबसे पहले अपने प्रसिद्ध 'क्यू–सिद्धांत' में निवेश और शेयर बाजार के बीच संबंध को औपचारिक रूप से सामने रखा।

यह व्यापक रूप से माना जाता है कि शेयर बाजार की हलचल फर्मों या अर्थव्यवस्था की स्थिति का एक कमजोर संकेतक होता है, कारण शेयर बाजार का बहिर्जात कारकों से प्रभावित होना। आज की दुनिया में, हालाँकि, हम शेयर बाजार और निगमित फर्मों के विकास के बीच संबंध को नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं।

फर्मों को पूँजी जुटाने में मदद करने में शेयर बाजार, एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इन इक्विटीज के खरीदार, यानी, शेयरधारक इन इक्विटीज को लेकर रखने से लाभांश और पूँजीगत लाभ (जो इक्विटी मूल्य में बदलाव के कारण उत्पन्न होते हैं) कमाते हैं।

क्यू–सिद्धांत के अनुसार, निवेश का स्तर किसी भी फर्म की परिसंपत्तियों के बाजार मूल्य और उन परिसंपत्तियों की प्रतिस्थापन लागत के बीच के अनुपात पर निर्भर करता है। टोबिन ने उल्लेख किया कि *यदि शेयर बाजार में किसी कंपनी का मूल्य परिसंपत्ति की प्रतिस्थापन लागत (किसी प्रकार की व्यापार नियत पूँजी) से काफी अधिक हो तो सिद्धांत रूप में उस कंपनी के पास निवेश बढ़ाने के लिए एक प्रमुख प्रोत्साहन होता है।* क्यू–अनुपात को निम्नवत् लिखा जा सकता है –

$$q = \frac{\text{स्थापित पूँजी का बाजार मूल्य}}{\text{पूँजी की प्रतिस्थापन लागत}} \quad \ldots (7.13)$$

अथवा,

$$q = \frac{\text{किसी फर्म की परिसंपत्तियों पर शेयर बाजार द्वारा तय मूल्य}}{\text{उस फर्म की परिसंपत्तियों का वास्तविक वर्तमान मूल्य}}$$

तदनुसार, यदि $q > 1$ हो तो उस नई पूँजी के मौद्रिक मूल्य की प्रत्येक इकाई के लिए जो फर्म खरीदने की योजना बना रही है, फर्म धन की q इकाइयों के लिए शेयरों को बेच सकती है और लाभ ($q - 1$) प्राप्त कर सकती है।

इस प्रकार, फर्म के समक्ष नए शेयरों के निर्गम के माध्यम से अपने पूँजी भंडार का विस्तार करने के लिए एक प्रोत्साहन दिखाई पड़ता है। इसका तात्पर्य फर्म के लिए निवेश में वृद्धि से है। इसी तरह के तर्क को लागू करते हुए, यदि $q < 1$ हो तो बाजार फर्म पर उसके वास्तविक मूल्य की तुलना में कम मूल्य रखता है। तदनुसार, फर्म को अपने पूँजी भंडार में वृद्धि करने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं होगा।

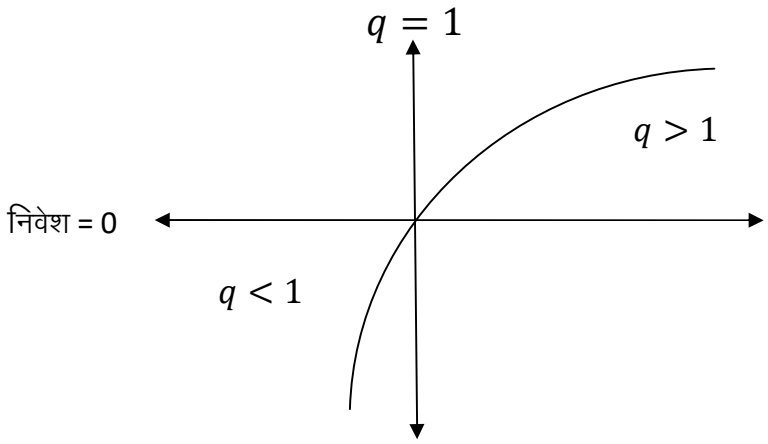

चित्र 7.3: निवेश का क्यू–सिद्धांत

यदि $q > 1$ हो तो निवल निवेश करने के लिए प्रोत्साहन अवश्य होगा। किंतु यदि $q < 1$ हो तो फर्मों को अपनी पूँजी को बेचना शुरू कर देना चाहिए क्योंकि उन्हें इसके लिए सेकेंड–हैंड मार्केट में शेयरधारकों द्वारा उस पर रखे गए मूल्य की तुलना में अधिक मूल्य मिलेगा।

उक्त क्यू–सिद्धांत, नियोक्लासिकल निवेश सिद्धांत से निकटता से इस तरह जुड़ा है कि यदि नई पूँजी पर लाभ की दर पूँजी की लागत से अधिक हो तो फर्मों को निवेश करना चाहिए। निवेश के सिद्धांत के रूप में क्यू–सिद्धांत का तात्पर्य है कि जब शेयर बाजार में तेजी होती है तो आमतौर पर शेयरों का मूल्यांकन अधिक होता है। यह फर्मों को नए शेयर जारी करके निवेश बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसी तर्क के अनुसार, जब शेयर बाजार में मंदी होती है तो निवेश कम हो सकता है।

इसके अलावा, फर्में मंदी रुख के दौर में विलय और अधिग्रहण के माध्यम से अपनी स्थिति को मजबूत करेंगी। टोबिन के प्रस्ताव के बावजूद, वास्तव में निवेश और शेयर भावों के बीच सकारात्मक संबंध कोई मजबूती नहीं दिखाते। इस कमजोर कड़ी के पीछे मुख्य कारण हैं – शेयर भावों की उच्च अस्थिरता, निवेश की समायोजन लागत, शेयरधारकों को सटीक जानकारी देने में शेयर बाजार की विफलता, शेयर बाजार पर बहिर्जात कारकों का प्रभाव और निवेशकों के मनोभाव।

बोध प्रश्न 1

1. मान लीजिए कि $MP_K = 20 - 0.02K$ प्रत्याशित भावी सीमांत उत्पाद है, जहाँ K भावी पूँजी स्टॉक है। मूल्यह्रास दर (–)20% है और वास्तविक ब्याज दर 10% प्रति अवधि है। फर्म उत्पादन के 50% के बराबर कर का भुगतान करती है। पूँजी की एक इकाई की कीमत उत्पादन की 1 इकाई है। कर–समायोजित वांछित पूँजी भंडार का मूल्य आकलित करें।

   .....

   .....

   .....

   .....

2. एक कॉब–डगलस उत्पादन फलन के लिए Υ (गामा, पूँजी का गुणांक) = 0.3, Y (उत्पादन) = 10 और rc (किराया लागत) = 0.12 है। यदि उत्पादन के 20 तक बढ़ने की उम्मीद हो तो वांछित पूँजी भंडार में कितना परिवर्तन होगा? मान लीजिए कि आय में बदलाव की उम्मीद से पहले पूँजी भंडार वांछित स्तर पर था। आगे मान लीजिए कि निवेश के लोचदार समायोजन मॉडल में $\lambda = 0.2$ रहता है। प्रत्याशित आय परिवर्तन के बाद पहले वर्ष में निवेश की दर क्या होगी?

.....

.....

.....

.....

3. एक ऐसी अल्पकालिक निवेश परियोजना पर विचार करें जिसकी लागत ₹ 1000 आज स्थापित करने के लिए (पहली अवधि में) आती है। यही परियोजना दूसरे वर्ष में ₹ 500 का लाभ और फिर तीसरे वर्ष में ₹ 700 का लाभ अर्जित करती है। तीसरे वर्ष के अंत तक कारखाना विघटित हो जाता है। क्या ब्याज दर 10% हो जाने पर परियोजना शुरू कर दी जानी चाहिए?

.....

.....

.....

.....

4. कोई देश किसी युद्ध में अपना अधिकांश पूँजी भंडार खाली कर बैठता है। पूँजी भंडार की इस हानि का वांछित निवेश पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

.....

.....

.....

.....

5. निवेश के क्यू–सिद्धांत के संदर्भ में मान लीजिए कि q इकाई से कम है। क्या किसी फर्म के लिए अपने पूँजी भंडार को बढ़ाना सही कदम होगा? अपने उत्तर का औचित्य प्रतिपादन करें।

.....

.....

.....

.....

7.3 आवासीय निवेश

वर्ष 2007–2009 की वैश्विक वित्तीय मंदी, जो कि अमेरिका में उत्पन्न हुई थी, 'हाउसिंग बबल' के ध्वस्त हो जाने के बाद मकानों की कीमतों में बड़ी गिरावट के कारण शुरू हुई थी। आवासीय निवेश में गिरावट मंदी से पहले हुई और उसके बाद घरेलू खर्च और फिर व्यावसायिक निवेश में कमी आई। यहाँ इस खंड में हम किराये के कमरों के लिए बाजार के संदर्भ में आवासन में निवेश के निर्धारक तत्वों का विश्लेषण करेंगे।

7.3.1 सैद्धांतिक प्राधार

आवासन व्यवसाय अर्थात् हाउसिंग मार्केट को दो खंडों में विभाजित कर समझा जा सकता है, यथा –

(i) मौजूदा मकानों की संख्या (पूँजी भंडार की भाँति), जो कि आवासों की कीमत निर्धारित करता है, और

(ii) नए निर्माण का प्रवाह (निवेश प्रवाह की भाँति), जो कि नए निवेश के स्तर को निर्धारित करता है।

उपर्युक्त किसी भी खंड में आघात अर्थात् नुकसान के झटके मकान की कीमतों को प्रभावित कर सकते हैं। इसे तथ्य को नमूने के रूप में प्रस्तुत करने के लिए हमें कुछ निश्चित मान्यताओं की आवश्यकता होगी और साथ ही कुछ संकेतों के अर्थ स्पष्ट करने की भी आवश्यकता होगी। आइए, देखें –

- अर्थव्यवस्था में किसी भी समय–बिंदु विशेष पर 'आवासन पूँजी' का एक स्थिर भंडार $H = \bar{H}$ विद्यमान रहता है क्योंकि पूँजी का एक नगण्य प्रतिशत भंडार में वार्षिक रूप से जुड़ता रहता है।
- निर्माण कार्य में अल्पावधिक भिन्नता का आवासन पूँजी भंडार पर बहुत कम प्रभाव पड़ेगा। प्रत्येक अवधि के आरंभ में आवासन पूँजी पिछले निवेश द्वारा निर्धारित की जाती है।
- आवास क्रेता स्वयं को निवेशकों के रूप में और अपने कब्जे वाले मकान को ऐसी अनेक परिसंपत्तियों में से एक के रूप देखते हैं जो धन–संपत्ति धारक अपने निवेश पेटिका या निवेश सूची में रख सकते हैं।
- गृहपति या मकान मालिक अपने कुछ खर्चों, विशेष रूप से संपत्ति कर और ऋण ब्याज के लिए कर कटौती का दावा कर सकते हैं, लेकिन उनकी किराये की आय पर कोई कर नहीं लगाया जाता है।
- विश्लेषण में सरलता के लिए हम मानकर चलते हैं कि सभी आवासन इकाइयाँ सजातीय होती हैं, जहाँ –

  R_H = मालिक के कब्जे वाले मकान पर प्रति अवधि किराये की सेवाओं का सीमांत (घर की 1 इकाई) मूल्य

  P_H = विद्यमान आवासन पूँजी की एक इकाई की कीमत = आवासन परिसंपत्ति की कीमत

  θ = निवेशक की सीमांत कर रियायत दर

  जब कोई आवास क्रेता ऋण लेकर अपने कब्जे वाला कोई मकान खरीदता है तो उसे ऋण ब्याज (यथा, i = मुद्रा की प्रत्येक इकाई पर वह ब्याज दर जिस पर ऋण लिया गया है) का भुगतान करना पड़ता है, और संपत्ति कर (यथा, τ_P मकान की कीमत के एक अंश स्वरूप) चुकाना पड़ता है।

देश के कर कानून के अनुसार कोई भी आवास क्रेता अपनी कर योग्य आय से उक्त व्यय (ऋण ब्याज और संपत्ति कर) के θ अनुपात में कटौती कर सकता है, जहाँ –

δ = आवासन पूँजी पर मूल्यह्रास दर

m = आवासन पूँजी की प्रति इकाई मूल्य रखरखाव लागत

Π^e = मात्रिक आवास मूल्यवृद्धि संबंधी निवेशकों की प्रत्याशित दर

विद्यमान आवासन इकाई के लिए बाजार निम्नलिखित साम्यावस्था संबंध द्वारा पूरित दर्शाया जाता है –

$$H^d = \bar{H} \qquad \ldots (7.16)$$

उपर्युक्त समीकरण (7.16) में हमें H^d को परिभाषित करने की आवश्यकता होगी, जो कि लागत–लाभ विश्लेषण के आधार पर मकान खरीदते समय आवास क्रेताओं द्वारा लिया गया माँग निर्णय इंगित करता है।

आवास की एक इकाई का लाभ मकान का अध्यारोपित किराया मूल्य (वह किराया जो वह अपने निजी मकान में रहकर बचा रहा है), यथा, R_H होता है। दूसरी ओर, आवास की एक इकाई के स्वामित्व एवं अधिग्रहण की लागत के तीन घटक होते हैं –

(i) मानक कटौती के बाद मकान की कीमत : इसे निम्नवत् दर्शाया जाता है –

$$P_H - \theta P_H(i + \tau_P) = P_H(1 - \theta)(i + \tau_P)$$

(ii) अवमूल्यन एवं अनुरक्षण लागत : इसे निम्नवत् दर्शाया जाता है –

$$P_H(m + \delta)$$

(iii) प्रत्याशित पूँजीगत लाभ अथवा हानि : यदि एक वर्ष में मकान का प्रत्याशित मूल्य $P_{H,t+1}$, हो तो $\Pi^e = \frac{P^e_{H,t+1} - P_{H,t}}{P_{H,t}}$ होगा। तदनुसार,

एक वर्ष में मकान पर प्रत्याशित पूँजीगत लाभ $= P_H \cdot \Pi^e$

यदि पूँजीगत लाभ धनात्मक हो तो आवास क्रेताओं को लाभ होता है (लागत ऋणात्मक होती है)। दूसरी ओर, यदि वह ऋणात्मक हो तो आवास क्रेता को हानि होती है (धनात्मक लागत)। आप देखेंगे कि यहाँ P_H और $P_{H,t}$ समतुल्य रूप से प्रयोग होते हैं।

साम्यावस्था में आवास क्रेता, ***लाभ = लागत*** । इसका अर्थ निम्नवत् स्पष्ट किया जाता है –

$$R_H = P_H[(1 - \theta)(i + \tau_P) + (m + \delta) - \Pi^e]$$

ऊपर समीकरण में दिए गए पदों को पुनर्व्यवस्थित कर हम निम्नलिखित समीकरण प्राप्त कर सकते हैं–

$$\underbrace{\frac{R_H}{P_H}}_{\text{अध्यारोपित किराया मूल्य और आवास मूल्य का अनुपात}} = \underbrace{[(1 - \theta)(i + \tau_P) + \delta + m - \Pi^e]}_{\text{आवास अधिग्रहण करने वाले की प्रयोगकर्ता लागत}} \qquad \ldots (7.17)$$

समीकरण (7.17) में विद्यमान आवास पूँजी के लिए संतुलन दशा को दर्शाया गया है। आप देखेंगे कि अल्पावधि में आवासों की आपूर्ति स्थिर अर्थात् लोचहीन होती है। मकानों की माँग आवास मूल्यों के वर्तमान स्तर, P_H के प्रतिलोम होती है।

आवास मूल्यों के वर्तमान स्तर और निवल नए निर्माण के भावी प्रवाह के बीच की कड़ी आवासीय निवेश की दर के रूप में निम्नवत् नजर आती है –

$$H_t - H_{t+1} = \phi\left(\frac{P_H}{C_t}\right) - \delta H_t \quad \ldots (7.18)$$

नव निर्माण का निवल प्रवाह

C_t ही निर्माण लागत है। नव आवासन पूँजी निर्माण t समयावधि में आरंभ होता है

इतनी संख्या में पुराने मकान जर्जर अवस्था में हैं

7.3.2 चित्रात्मक विश्लेषण

आगे दिए गए चित्र 7.4 का खंड (a) दर्शाता है कि विद्यमान आवासों की कीमत P_H आपूर्ति वक्र (SS) और माँग वक्र (DD) की अंतर्क्रिया से निर्धारित होती है। समय के किसी क्षण विशेष में विद्यमान आवासन पूँजी हेतु आपूर्ति वक्र लोचहीन (ऊर्ध्वाधर) है क्योंकि आपूर्ति को अल्पावधि में नहीं बढ़ाया जा सकता है। आवासन के लिए माँग वक्र नीचे की ओर झुका हुआ है क्योंकि ऊँची कीमतें लोगों को निम्नलिखित में से कोई भी प्रतिक्रिया करने के लिए मजबूर कर देती हैं –

(i) घर खरीदने की माँग पर अंकुश लगाना,
(ii) लोगों को छोटे घरों में रहने के लिए मजबूर करना,
(iii) साझा आवास, अथवा
(iv) बेघर हो जाने की स्थिति तक चले जाना।

आवास की कीमतों में समायोजन इसलिए होता है कि माँग और आपूर्ति के बीच संतुलन बना रहे। निम्न कारकों में गिरावट माँग वक्र को ऊपर की ओर ले जाती है (ताकि माँग में वृद्धि हो, जबकि कीमतें स्थिर रहें), यथा –

(i) ऋण ब्याज दर,
(ii) संपत्ति कर दर,
(iii) मूल्यह्रास दर,
(iv) रखरखाव लागत, और
(v) अन्य परिसंपत्तियों पर लाभ।

दूसरी ओर, कुछ कारकों में उछाल आवासों के माँग वक्र को ऊपर की ओर ले जाता है, यथा –

(i) जनसंख्या का आकार,
(ii) धन–संपत्ति,
(iii) आमदनी, और
(iv) आवासों से प्रत्याशित पूँजीगत लाभ।

इसी चित्र 7.4 का खंड (b) *किसी ज्ञात समयावधि* में नये आवासों का आपूर्ति वक्र (FS) दर्शाता है। इसे आवास मूल्यों के किसी धनात्मक फलन के रूप में इंगित किया जाता है। आवास मूल्यों में कोई भी वृद्धि पहले से अधिक संख्या में मकान प्रस्तुत करने हेतु प्रोत्साहन प्रदान करती है।

यदि खंड (a) में विद्यमान आवासों की कीमत बढ़ जाती है (पिछले अनुच्छेद में उल्लिखित कारकों की वजह से) तो इसका प्रत्युत्तर बिल्डर्स अथवा डेवलपर्स नए घर बनाकर देते हैं। इस प्रकार, विद्यमान आवासन की कीमतों को प्रभावित करने वाला कोई भी कारक नए

घरों के निर्माण को प्रभावित करेगा, जिसके परिणामस्वरूप FS वक्र के साथ कोई परिवर्तन दिखाई देगा। कोई भी कारक (उदाहरण के लिए, निर्माण लागत) जो FS वक्र को स्थानांतरित कर देगा, आवासीय निवेश की दर को प्रभावित करेगा।

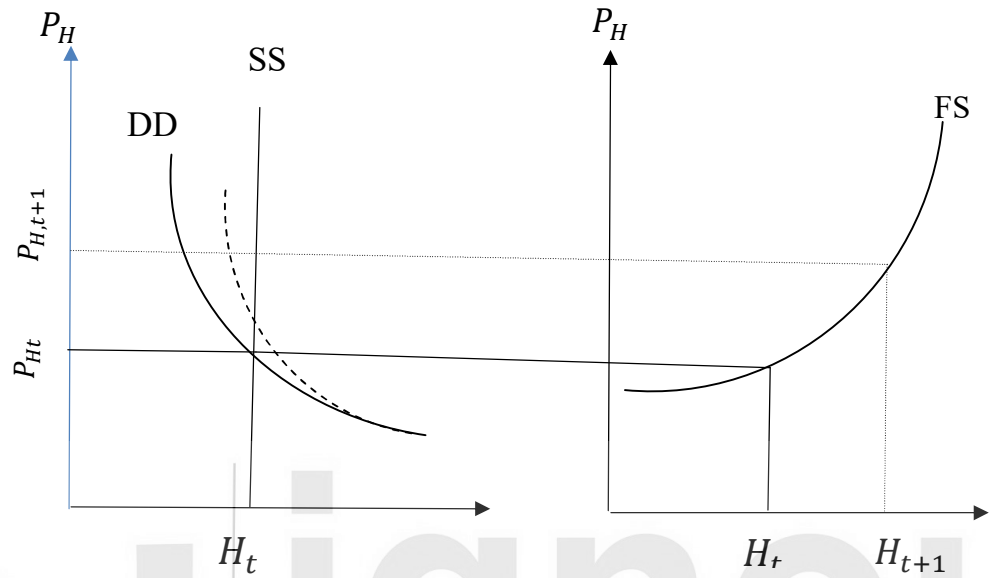

खंड (a): आवासन पूँजी खंड (a): नए आवासन की आपूर्ति

चित्र 7.4: आवासन बाजार

आवासों की माँग में कोई भी वृद्धि से आवास कीमतों और आवासीय निवेश में वृद्धि की ओर प्रवृत्त करती है।

आप देखेंगे कि नए आवास निर्माण की तुलना में आवासन की विद्यमान पूँजी कहीं अधिक है। तदनुसार, हम प्रायः अल्पावधि में विद्यमान आवासों की कीमत पर नए आवासों की आपूर्ति के प्रभाव की उपेक्षा कर देते हैं। बहरहाल, कालांतर में जैसे–जैसे नए निर्माण से विद्यमान आवासों की पूँजी में वृद्धि होती है, इसके कारण SS वक्र दाईं ओर खिसक जाता है।

7.3.3 मॉडल के निहितार्थ

आवासीय निवेश के लिए हमने जो प्राधार प्रस्तुत किया है, उसके कई निहितार्थ होते हैं। आइए, इनमें से कुछ पर चर्चा करें।

- होम लोन पर दी जाने वाली आयकर छूट का लाभ गरीब परिवारों तक नहीं पहुँचता है क्योंकि यह उच्च आय वाले ऐसे समूहों पर ही लागू होता है जो आयकर का भुगतान करते हैं। इसी प्रकार, जब मौद्रिक ब्याज दर प्रत्याशित मुद्रास्फीति के साथ बढ़ती है तो उधार लेने की कर–पश्चात सीमांत लागत, $((1-\theta)i - \Pi^e$ प्रत्याशित मुद्रास्फीति बढ़ने पर घट जाती है। यह प्रभाव उच्च आय वाले परिवारों के लिए अधिक स्पष्ट है और इस कारण कम आय वाले परिवारों की तुलना में आवास हेतु उनकी माँग में अधिक वृद्धि होनी चाहिए।
- व्यक्तियों की आमतौर पर 20 से 40 आयु वर्ग (विवाह, बच्चों आदि के कारण) में आवास की अधिक माँग होती है। अतः इस आयु वर्ग में जनसंख्या का प्रतिशत आवास की माँग में परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व होता है। तदनुसार, किसी भी जनसांख्यिकीय परिवर्तन (उदाहरण के लिए, लॉकडाउन अवधि के दौरान

'बेबी बूम' अर्थात् शिशु जन्म में सहसा वृद्धि) का असर 20 से 30 वर्षों के अंतराल के साथ आवास की कीमतों पर पड़ेगा।

- प्रत्याशित मुद्रास्फीति, Π^e के लिए युक्तियुक्त प्रत्याशा प्राधार का प्रयोग करना आकर्षक होता है। परंतु अनुभवजन्य अवलोकन हमें बताता है कि आवास क्रेता अतीत की जानकारी (कीमत की प्रत्याशाओं को निर्धारित करने के लिए मुड़कर देखने वाली प्रक्रिया) पर बहिर्वेशन करते हैं। यदि हम इस प्रक्रिया को अपने मॉडल में शामिल करते हैं तो इसका परिणाम आवास बाजार में व्यवस्थित पुनर्निर्माण के रूप में सामने आता है।
- यदि जनसंख्या, आय और धन स्थिर दर से बढ़ रहे हों तो दीर्घावधिक साम्यावस्था यह संकेत देगी कि आवासों के निर्माण की दर मूल्यह्रास और माँग में स्थिर वृद्धि से निपटने के लिए पर्याप्त होगी। परंतु ऐसी अर्थव्यवस्था में जहाँ माँग में बदलाव अचानक होता है, आवश्यक नहीं कि दीर्घावधिक साम्यावस्था हासिल हो ही जाए। किसी भी गतिहीन अर्थव्यवस्था में दीर्घावधिक साम्यावस्था तब हासिल होगी जब निवल आवासीय निवेश शून्य होगा।
- बिल्डर्स अपने निर्माण कार्य के वित्तपोषण के लिए ऋण लेते हैं। इसलिए ऋण ब्याज दर प्रवाह आपूर्ति (FS) वक्र को भी प्रभावित करती है।

7.4 माल–सूची निवेश

इन्वेंटरी अर्थात् माल–सूची फर्मों के साथ–साथ पूरी अर्थव्यवस्था के लिए भी महत्वपूर्ण होती है। यह सकल घरेलू उत्पाद का एक छोटा घटक जरूर होती है, परंतु अपनी उल्लेखनीय अस्थिरता के कारण यह व्यापार चक्र के उतार–चढ़ाव का लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा बन जाती है। अतएव, समष्टिक आर्थिक उतार–चढ़ाव का पूर्वानुमान करने और उसका मुकाबला करने के लिए माल–सूची संचय के व्यवहार को समझना सार्थक होगा। माल–सूची की दो व्यापक श्रेणियाँ होती हैं, यथा –

(i) विनिर्माता की माल–सूची, और
(ii) फुटकर माल–सूची।

विनिर्माता की माल–सूची के अंतर्गत आगे वर्गीकरण निम्नवत् किया जाता है –

(a) तैयार माल,
(b) निर्माणाधीन माल,
(c) कच्चा माल एवं आपूर्ति, और
(d) थोक माल–सूची।

व्यापार में उतार–चढ़ाव के लिए उत्तरदायी प्रमुख प्रकार की माल–सूचियों में सबसे ऊपर फुटकर माल–सूची देखी जाती हैं। इसके बाद ही कच्चे माल और रसद आपूर्ति का स्थान आता है।

भारत में माल–सूचियों में परिवर्तनों को प्रायः अर्थव्यवस्था के समग्र कार्य–निष्पादन के लिए एक प्रमुख संकेतक माना जाता है। इसे व्यापक परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए हमें माल–सूचियाँ तैयार कर रखने के उद्देश्यों की जाँच करने की आवश्यकता होगी।

आइए, जानें कि व्यापार प्रतिष्ठान माल का भंडारण अलग से क्यों करते हैं।

7.4.1 माल–सूची रखने का उद्देश्य

माल निवेश को माल–सूचियों के संचय में निवल वृद्धि के रूप में परिभाषित किया जाता है। फर्में विभिन्न कारणों से माल–सूचियाँ रखती हैं, यथा –

1. **उत्पादन समकरण** : प्रतिनिधि फर्मों को प्रायः अपने उत्पाद की माँग के लिए अल्पकालिक झटके का अनुभव होता है। अपने उत्पादों की माँग के लिए अप्रत्याशित झटके को झेलने के लिए फर्में माल–सूची का उपयोग कर सकती है। ये फर्में बाजार में उतार–चढ़ाव से मेल खाने के लिए अपने उत्पादन को समायोजित करने के स्थान पर अपने उत्पादन को किसी स्थिर दर पर जारी रखना पसंद करती हैं। इस प्रकार, किसी भी उत्कर्ष अवधि के दौरान ऐसी फर्में अपनी माल–सूची को निपटाकर समाप्त कर देती हैं और बाजार में मंदी छायी होने के दौरान इसमें फिर से वृद्धि करती हैं।

2. **उत्पादन क्रम–निर्धारण** : माल–सूचियाँ बहु–उत्पाद फर्मों को अपने उत्पादन का क्रम निर्धारित करने में लचीलापन प्रदान करती हैं।

3. **वितरण अंतराल को कम करना** : कोई भी माल–सूची उस स्थिति में किसी भी एकल फर्म की माँग को प्रोत्साहित कर सकती है जब वह माल सुपुर्दगी में पिछड़ रही हो।

4. **उत्पादन कारक कारकों** को मुख्य रूप से भावी कीमतों में वृद्धि की मार से बचने के लिए संचित करती हैं। इसके अलावा, कच्चे माल की सूचियाँ भी तैयार करके रखी जाती हैं क्योंकि किसी भी फर्म के लिए उत्पादन के विशिष्ट कारकों का थोक में ऑर्डर देना अपेक्षाकृत कम खर्चीला होता है।

5. **अप्राप्यता से बचाव** : फर्मों को सामान्यतः अपने उत्पाद की प्रत्याशित बिक्री के आधार पर उत्पादन निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। अप्राप्यता की स्थिति के कारण कोई भी कमतर आकलन फर्म के लिए उसकी बिक्री एवं लाभ की हानि का कारण बन सकता है। ऐसी 'आउट–ऑफ–स्टॉक' स्थितियों से बचने के लिए फर्में प्रायः माल–सूची रखती हैं।

6. **अर्धनिर्मित माल उत्पादन** : कुछ माल–सूचियों को उत्पादन प्रक्रिया के एक अपरिहार्य भाग स्वरूप में रखा जाता है, खासकर जब उत्पादन प्रक्रिया में कई चरण शामिल होते हैं और उत्पादन करने में समय लगता है। उदाहरण के लिए, जब किसी कार की असेंबलिंग आंशिक रूप से पूरी हो जाती है तो निर्माणाधीन कार के घटकों को भी विनिर्माता ऑटोमोबाइल फर्म की माल–सूची के हिस्से के रूप में गिना जाता है।

समष्टि–अर्थशास्त्रीय मॉडल में माल निवेश का वर्गीकरण इस बात पर निर्भर करता है कि हम अपनी माल–सूचियों को क्या मानते हैं – उत्पादन अथवा आगत? यह व्यापक रूप से देखा गया है कि उच्च माल–सूची पूँजी चालू उत्पादन को कम कर देती है। जब फर्मों को पता चलता है कि वे अपने द्वारा उत्पादित मात्रा को बेचने में सक्षम नहीं हैं तो वे अपना उत्पादन स्तर घटा देती हैं।

माल–सूची निवेश का केंद्रीय पहलू नियोजित (अभिप्रेत) और अनियोजित (अनभिप्रेत) माल–सूची निवेश के बीच अंतर पर टिका है। माल–सूची पूँजी में नियोजित परिवर्तन, फर्मों द्वारा अपनी माल–सूची पूँजी को अपने लक्षित स्तर की ओर आंशिक रूप से समायोजित करने का परिणाम होता है। दूसरी ओर, बिक्री के पूर्वानुमान में त्रुटियों के कारण माल–सूची पूँजी में अनियोजित या निष्क्रिय परिवर्तन उत्पन्न हो सकता है।

माल–सूचियों के स्वभाव की विशिष्टता और माल–सूची रखने के उद्देश्य के आधार पर निवेश विद्या में विभिन्न व्यष्टिक मॉडल देखे जाते हैं।

केन्जियन मॉडल में हमने देखा कि यदि कुल उत्पादन नियोजित कुल व्यय से अधिक हो तो माल का अंबार लगना शुरू हो जाता है। माल–सूची की ऐसी असंतुलन की स्थिति फर्मों के साम्यावस्था पर पहुँचने तक अपने उत्पादन में कटौती करने का संकेत दे देती है। यह सांकेतिक रूप से संतुलन को एक ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित करता है जहाँ माल–सूची स्थिर होती है।

7.4.2 माल–सूची, वास्तविक ब्याज दर और व्यापार चक्र

व्यापार चक्र को जन्म देने वाले सर्वाधिक सशक्त कारकों में से एक माल–सूचियों में व्यापार निवेश ही है। यद्यपि माल–सूची की वार्षिक राशि कुल स्थिर निवेश का एक बहुत छोटा अंश ही होती है परंतु, इसकी उच्च–स्तरीय परिवर्तनशीलता के कारण इसे अल्पावधिक व्यापार चक्र में उतार–चढ़ाव के पीछे एक प्रमुख कारक माना जाता है। इसके अलावा, माल–सूची संचय का अनियमित अल्पावधिक व्यवहार गंभीर पूर्वानुमान समस्या पैदा करता है। व्यापार चक्र में माल–सूची की भूमिका अप्रत्याशित और प्रत्याशित माल–सूची परिवर्तन का परिणाम होती है। ऐसे तीन मार्ग हैं जिनके माध्यम से माल–सूची निवेश किसी भी अर्थव्यवस्था में विकास प्रक्रिया को अस्थिर कर सकता है, यथा –

(i) माँग प्रभाव,
(ii) लागत प्रभाव, और
(iii) वित्तीय प्रभाव।

माल–सूचियाँ रखने की लागत ही वह किराया कीमत है जिसमें दो घटक होते हैं, यथा –

(i) माल–सूची की पूँजी का मूल्यह्रास, और
(ii) वह ब्याज लागत जो उस ऋण पर चुकाई जानी चाहिए जो माल–सूची को वित्तपोषित करती है (अथवा, वह ब्याज राशि जो फर्म भावी बिक्री के लिए माल को माल–सूची के रूप में रखने के बजाय आज ही बेचकर अर्जित की जा सकती थी)।

इस प्रकार, सैद्धांतिक रूप से यह कहा जा सकता है कि वास्तविक ब्याज दर माल–सूचियाँ रखने की अवसर लागत को मापती है। इसलिए, यदि अनेक उद्यम बैंक ऋणों पर बहुत अधिक निर्भर हों तो वास्तविक ब्याज दर में वृद्धि व्यापार प्रतिष्ठानों को अपनी माल–सूची पूँजी को कम करने के लिए मजबूर करती है। शायद इसीलिए सन 1980 के दशक में संयुक्त राज्य अमेरिका में उच्च ब्याज दर की व्यापकता के कारण कई फर्मों ने 'जस्ट–इन–टाइम' व्यापार रणनीति अपनाई। इसका सीधा–सा मतलब होता है – बिक्री से ठीक पहले माल का उत्पादन।

यद्यपि माल–सूची निवेश की ब्याज संवेदनशीलता संबंधी अवधारणा सैद्धांतिक रूप से आकर्षक है, यह न तो निर्णायक सिद्ध होती है और न ही निश्चित। दरअसल, यह कुछ विशिष्ट कारकों पर निर्भर करती है, जो कि निम्नलिखित हैं –

(i) ब्याज दर को नियंत्रित करने में केंद्रीय बैंक नीति की प्रभावशीलता, और
(ii) माल–सूचियों की पूँजी जुटाने के लिए फर्मों की बैंक ऋण पर निर्भरता।

यदि बड़े उद्यम बैंक ऋण पर निर्भर नहीं करते हैं तो वे कर्ज की तंगी की मार से बच सकते हैं। उस स्थिति में उच्च ब्याज दर का माल–सूची संचय पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ेगा।

बोध प्रश्न 2

1. मान लीजिए कि ऋण (होम लोन) की ब्याज दर बढ़ गई है। यह भी मान लें कि निर्माण में देरी के कारण नए आवास की आपूर्ति उस कीमत का एक फलन है, जो निर्माण कार्य पूरा होने के बाद अभिभावी हो जाने की उम्मीद है। यदि आवास की प्रत्याशित कीमतें यथावत रहती हैं तो नए आवास की उत्पादन दर पर क्या प्रभाव दिखाई देगा? स्पष्ट करें।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. एक काल्पनिक ऑटोमोबाइल डीलर प्रति माह 50 कारें बेचता है और माल–सूची में औसतन एक महीने की बिक्री रखता है। मान लें कि बिक्री में 50 प्रतिशत की गिरावट आई है और इस बदलाव का जवाब देने के लिए उस डीलर को दो महीने लगते हैं (इसका मतलब है कि वह दो महीने के लिए वर्तमान दर पर ऑर्डर करता रहता है)। बिक्री में गिरावट के अनुरूप वह डीलर कारों की मासिक बिक्री के एक नए स्तर पर अपनी इन्वेंट्री को बनाए रखना चाहता है। वह कितने महीने तक कोई नई कार ऑर्डर नहीं करेगा?

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

7.5 सार–संक्षेप

इस इकाई का उद्देश्य किसी अर्थव्यवस्था में निवेश के निर्धारक तत्वों की जाँच करना रहा। इन निर्धारक तत्वों की जाँच करने का मुख्य कारण निवेश में दीर्घस्थायी अस्थिरता के अंतर्जात स्वभाव से उत्पन्न होता है।

इस इकाई में हमने तीन प्रमुख प्रकार के निवेशों को शामिल किया, यथा – व्यापार स्थिर निवेश, आवासीय निवेश और माल–सूची निवेश।

व्यापार स्थिर निवेश के नियोक्लासिकल मॉडल के अनुसार, फर्में तभी निवेश करती हैं जब पूँजी का किराया मूल्य कीमत पूँजी की लागत से अधिक हो अन्यथा फर्में विनिवेश ही करती हैं।

पूँजी की लागत में वास्तविक ब्याज दर, मूल्यह्रास दर और पूँजी का आपेक्षिक मूल्य शामिल होता है। पूँजी की लागत विभिन्न कर संहिताओं और कर कानूनों से भी प्रभावित होती है।

लोचदार त्वरक मॉडल में फर्में प्रत्येक अनुवर्ती समयावधि में वास्तविक पूँजी भंडार और वांछित पूँजी भंडार के बीच के अंतर को केवल आंशिक रूप से खत्म करने का प्रयास करती हैं।

टोबिन के निवेश संबंधी क्यू–सिद्धांत में किसी भी फर्म का निवेश उसकी परिसंपत्तियों की प्रतिस्थापन लागत की तुलना में परिसंपत्तियों के बाजार मूल्यांकन पर निर्भर करता है। यदि किसी फर्म की परिसंपत्तियों का बाजार मूल्य उनकी प्रतिस्थापन लागत से अधिक हुआ तो वह फर्म अधिक इक्विटीज जारी कर अपने पूँजी आधार का विस्तार करेगी।

आवासन पूँजी की लोचहीन अल्पावधिक कुल आपूर्ति आवास की कीमतों को पूरी तरह से आवास की माँग पर निर्भर बना देती है। परिणामस्वरूप, आवास की माँग ऋण ब्याज दर, ऋण उपलब्धता, आयकर छूट नीति, सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर, जनसंख्या के आकार, आदि पर निर्भर करती है। आपूर्तिकर्ताओं की ओर से निर्माण लागत और निर्माण में देरी आदि कारक आवासीय निवेश को प्रभावित करते हैं।

फर्मों द्वारा माल–सूचियाँ विभिन्न उद्देश्यों से तैयार की जाती हैं। निजी निवेश के इस छोटे–से घटक में अल्पावधिक व्यापार चक्र को प्रभावित करने के लिए अतीव परिवर्तनशीलता और अपार क्षमता होती है।

इकाई में चर्चा किए गए कारकों के अलावा, कुछ बहिर्जात चर भी होते हैं जो किसी अर्थव्यवस्था में निवेश को प्रभावित करते हैं। राजनीतिक अनिश्चितता, सामाजिक अशांति, भ्रष्टाचार, प्राकृतिक आपदा आदि निजी निवेश के निर्णय को काफी हद तक प्रभावित करते हैं।

7.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1. पूँजी की एक इकाई उत्पादन की MP_K इकाइयों का योगदान करती है। उस उत्पादन का 50% कर के रूप में भुगतान करने के बाद पूँजी की एक इकाई का कर–समायोजित निवल योगदान = $(1 - 50\%)\ MP_K$ होगा।
   कर–समायोजित MP_K का मूल्य = $Y\ (1 - 50\%)\ MP_K$ { क्योंकि 1 इकाई पूँजी का मूल्य = 1 इकाई उत्पादन}
   वांछित पूँजी भंडार निम्नवत् होगा –
   कर–समायोजित MP_K का मूल्य = पूँजी की 1 इकाई की उपयोगकर्ता लागत
   = एक इकाई पूँजी की किराया लागत * पूँजी की कीमत
   = $(20\% + 10\%)Y$
   अब इन दोनों पदों को समान करें और K के लिए हल करें। आपको वांछित पूँजी भंडार = 970 इकाइयाँ प्राप्त होंगी।

2. दोनों पक्षों $MP_K = rc$ को बराबर करने पर हमें प्राप्त होता है –
   वांछित पूँजी भंडार = $\frac{\gamma.Y}{rc}$
   उपर्युक्त में सभी मानों और Y = 10 रखने पर हमें प्राप्त होता है –
   वांछित पूँजी भंडार = 50.

इसी प्रकार,

Y = 20 के लिए वांछित पूँजी भंडार हो जाता है = 50

वांछित पूँजी भंडार में परिवर्तन = (50 – 25) = 25

आरंभतः वास्तविक पूँजी भंडार था = 25.

आय परिवर्तन के बाद वांछित पूँजी भंडार हो गया = 50

पहली अवधि में निवेश की दर = λ (K* – K) = 1/5 * (50 – 25) = 5

3. भावी लाभ का वर्तमान मूल्य = $\frac{500}{(1+.1)} + \frac{700}{(1+.1)^2} = 1033.$ परियोजना की लागत 1000 थी। तदनुसार, परियोजना को शुरू किया ही जाना चाहिए।

4. निवेश की दर है = λ (वांछित पूँजी भंडार – वास्तविक पूँजी भंडार) चर λ के मान पर ध्यान दिए बिना, निवेश की दर तब कहीं ऊँची चली जाएगी जब अंतर (K* – K) और बढ़ जाएगा। यदि युद्ध के कारण वास्तविक पूँजी भंडार घट गया हो और वांछित पूँजी भंडार यथावत रहता हो तो अंतर अधिक होता है और निवेश की दर में वृद्धि होती है।

5. यह एक गलत कदम होगा। निवेश के क्यू–सिद्धांत में, q = परिसंपत्ति का मूल्य / उन परिसंपत्तियों की उत्पादन लागत। इसलिए, यदि q कम हो तो उन परिसंपत्तियों की उत्पादन लागत उन परिसंपत्तियों के अपने मूल्य से अधिक होगी। अतः, फर्म के लिए अधिक परिसंपत्तियों का उत्पादन करना कोई उत्तम विचार नहीं होगा।

बोध प्रश्न 2

1. होम लोन पर ब्याज दर बढ़ी है। इसलिए विद्यमान आवासों के लिए माँग वक्र नीचे की ओर खिसक जाता है। विद्यमान आवासों का आपूर्ति वक्र यथावत रहता है। इस प्रकार, आवासों का वर्तमान मूल्य नीचे चला जाता है। बहरहाल, चूँकि नए आवासन की आपूर्ति आवासों की विद्यमान कीमतों का फलन नहीं दर्शाती, बल्कि यह आवासन की प्रत्याशित भावी कीमत का वह फलन है जो बदली नहीं है। अतः, नए आवासन के उत्पादन की दर यथावत रहेगी।

2. यह डीलर 50 कारें बेच रहा था और 50 कारों को माल–सूची में रख रहा था। बिक्री में 50% की गिरावट के बाद मासिक बिक्री 25 हो जाएगी। आगे 2 महीने के लिए डीलर अभी भी प्रति माह 50 नई कारों का ऑर्डर देगा। इस प्रकार उसने इन दो महीनों में 50 कारों में 50 और कारें जोड़ीं। उसका स्टॉक अब 100 हो गया है। यदि वह प्रति माह 25 कारें बेचने जा रहा है और अपनी माल–सूची में 25 कारों को बनाए रखना चाहता है तो वह माल–सूची से 25 × 3 = 75 कारें ले सकता है और 3 महीने के लिए बिना किसी नई कार का ऑर्डर दिए 3 महीने तक बेच सकता है।

इकाई 8 मुद्रा की माँग : उत्तर–केन्जियन अवधारणा*

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 मुद्रा की लेन–देन माँग

8.2.1 मुद्रा की लेन–देन माँग का बॉमोल–टोबिन मॉडल

8.2.2 लेन–देन की इष्टतम संख्या

8.2.3 कुल मुद्रा माँग

8.2.4 बॉमोल–टोबिन मॉडल की सीमाएँ

8.3 निवेश सूची सिद्धांत

8.3.1 निवेश–सूची संतुलन दृष्टिकोण

8.3.2 निवेशक का जोखिम अधिमान और इष्टतम निवेश–सूची आवंटन

8.3.3 कुल मुद्रा माँग की ब्याज–दर संवेदनशीलता

8.3.4 पूँजीगत लाभ के प्रायिकता वितरण का महत्व

8.4 फ्रीडमैन का मुद्रा माँग दृष्टिकोण

8.4.1 मुद्रा माँग फलन

8.4.2 मुद्रा का आय संवेग

8.4.3 फ्रीडमैन के मुद्रा–माँग सिद्धांत के निहितार्थ

8.5 सार संक्षेप

8.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

8.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि –

- लोगों द्वारा अपने पास मुद्रा रखे जाने के पीछे उद्देश्यों की पहचान कर सकें;
- यह पता लगा सकें कि लोग अपने पास नकद में कितनी राशि रखना पसंद करते हैं;
- स्पष्ट कर सकें कि ब्याज दर में परिवर्तन से मुद्रा की माँग कैसे और किस सीमा तक प्रभावित होती है;
- व्यक्तियों की निवेश सूची की इष्टतम संरचना को निर्धारित करने वाले कारकों की पहचान कर सकें;
- वर्णन कर सकें कि जोखिम के प्रति रवैया मुद्रा की माँग को किस प्रकार प्रभावित करता है; तथा
- समझा सकें कि मुद्रा को उत्पादक वस्तु और उपभोक्ता वस्तु के रूप में कैसे देखा जा सकता है।

* सुश्री वैशाखी मंडल, सहायक प्राध्यापक, इंद्रप्रस्थ महिला कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

8.1 प्रस्तावना

हम मुद्रा अर्थात् धन की माँग क्यों करते हैं? इस प्रश्न का उत्तर सरल प्रतीत होता है, परंतु इस विषय पर अर्थशास्त्रियों के बीच कोई सर्वसम्मति नहीं है। अतएव, मुद्रा की माँग संबंधी अनेक वैकल्पिक सिद्धांत देखने में आते हैं। कीन्स ने मुद्रा की सट्टा अर्थात् प्रत्याशित माँग की अवधारणा पर प्रकाश डाला। बहरहाल, केन्जियन दृष्टिकोण को डब्ल्यू. जे. बॉमोल (1952), टोबिन (1956) और फ्रीडमैन (1958) द्वारा चुनौती दी गई है।

इस इकाई में हम मुद्रा की माँग संबंधी उत्तर–केन्जियन सिद्धांतों पर चर्चा करेंगे। इस संदर्भ में हम इन मॉडलों पर विचार करेंगे –

(i) मुद्रा के लेन–देन सबंधी माँग का बॉमोल–टोबिन मॉडल,
(ii) टोबिन का निवेश–सूची आवंटन मॉडल, और
(iii) फ्रीडमैन के मुद्रा सिद्धांत का पुनर्कथन।

8.2 मुद्रा की लेन–देन माँग

आर्थिक अभिकर्ताओं द्वारा लेन–देन को सुविधाजनक बनाने की आवश्यकता से उत्पन्न होने वाली मुद्रा की माँग को ही उसकी **लेन–देन माँग** कहा जाता है। मुद्रा के लिए लेन–देन की माँग मुद्रा की एक संकीर्ण परिभाषा को दर्शाती है, यथा, नकद, चेक खाता शेष, आदि। मूल रूप से यह मुद्रा की M1 परिभाषा को इंगित करती है।

मुद्रा की माँग के लेन–देन संबंधी सिद्धांत विभिन्न रूप दर्शाते हैं, जो कि इस बात पर निर्भर करता है कि मुद्रा प्राप्त करने और लेन–देन करने की प्रक्रिया कैसे प्रतिरूपित की जाती है। इस श्रेणी के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण मॉडल हैं –

(i) बॉमोल–टोबिन मॉडल,
(ii) शॉपिंग–टाइम मॉडल, और
(iii) कैश–इन–एडवांस मॉडल।

आगे हम इनमें सबसे प्रमुख अर्थात् बॉमोल–टोबिन मॉडल पर चर्चा करेंगे।

8.2.1 मुद्रा की लेन–देन माँग का बॉमोल–टोबिन मॉडल

यहाँ हम बॉमोल–टोबिन मॉडल का एक सरल संस्करण प्रस्तुत करेंगे, जिसे स्वतंत्र रूप से विलियम बॉमोल (1952) और जेम्स टोबिन (1956) द्वारा विकसित किया गया था। यह *इन्वेंट्री थ्योरेटिक एप्रोच* का प्रयोग कर मुद्रा रखने की लागत और लाभ पर जोर देता है। यह मॉडल मूल रूप से, उन कुल मुद्रा माँग फलनों को लिए व्यष्टिक नींव प्रदान करने के उद्देश्य से विकसित किया गया था, जो आमतौर पर केन्जियन और मुद्रावादी अर्थशास्त्रीय मॉडल में प्रयोग किए गए।

उक्त मॉडल की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

- मुद्रा लेन–देन के उद्देश्य से रखा जाता है। तदनुसार, यह एक विनिमय के माध्यम स्वरूप कार्य करता है। नकदी रखना व्यक्ति या आर्थिक अभिकर्ता के लिए एक माल–सूची के रूप में देखा जाता है। उक्त व्यक्ति नकदी रखने की लागत को न्यूनतम करेगा।
- नकद में मुद्रा (जो ब्याज नहीं देता है) रखने का विकल्प ब्याज देने वाले ऋणपत्र रखना है।

- किसी भी व्यक्ति के लिए आय प्राप्त करने का समय और धन खर्च करने का समय समक्रमिक नहीं होता है। महीने में एक बार आय प्राप्त होती है जबकि क्रय / व्यय पूरे महीने समान रूप से होता ही रहता है।
- आय–प्राप्ति और व्यय के प्रवाह के बीच समय के अंतर को खत्म करने के लिए मुद्रा को नकद में रखा जाता है।
- व्यक्ति अपने समान रूप से फैले व्यय प्रवाह को सुविधाजनक बनाने, नकदी का उपयोग करने और फिर से विनिमय के लिए जाने के लिए ऋणपत्र को नकदी में बदल देता है।
- हर बार जब अभिकर्ता ऋणपत्रों को नकद में बदलता है तो इस पर कुछ लेन–देन लागत आती है अथवा दलाली शुल्क लगता है, जो कि स्थिर होता है और विनिमय की मात्रा से स्वतंत्र होता है। हम इस विनिमय को लेन–देन का नाम देते हैं।
- चूँकि इस प्रकार के प्रत्येक विनिमय (लेन–देन) में लागत शामिल होती है, व्यक्ति ऋणपत्रों पर ब्याज आय और लेन–देन की लागत (विनिमय) के बीच समझौताकारी तालमेल को ध्यान में रखता है।
- व्यक्ति का औसत नकद / मुद्रा धारण किए गए लेन–देन (विनिमय) की संख्या से निर्धारित होता है।
- कोई भी विवेकशील व्यक्ति अपनी विनिमय (लेन–देन) लागत को कम करेगा और अपने लेन–देन की इष्टतम संख्या के विषय में उचित निर्णय लेगा।
- मुद्रा की कुल माँग इस प्रतिनिधि व्यक्ति की औसत मुद्रा धारण संबंधी माँग को दर्शाएगी।

आइए, निम्नलिखित संकेत–चिह्नों का प्रयोग सीखें –

$y =$ आवधिक वास्तविक आय [समयावधि एक महीना या एक वर्ष हो सकती है]

$T =$ दिवसों में समस्त अवधि (माह अथवा वर्ष) की दीर्घता

$n =$ समयावधि के दौरान विनिमय (लेन–देन) की संख्या

$b =$ प्रति लेन–देन दलाली शुल्क

$r =$ वास्तविक ब्याज दर

चूँकि पूरी अवधि (जिसमें T दिवस हैं) में n संख्या में विनिमय किया जा रहा है, अवधि को n अंतराल में विभाजित किया गया है और दिवसों में प्रत्येक अंतराल की दीर्घता $\frac{T}{n}$ दिवस है। सुचारु एवं समान रूप से वितरित व्यय प्रवाह की सुविधा के लिए अभिकर्ता की वास्तविक आवधिक आय y इन n अंतरालों में समान रूप से वितरित की जाती है और इनमें से प्रत्येक अंतराल की व्यय आवश्यकता $\frac{y}{n}$ होती है।

समयावधि के आरंभ में, जब व्यक्ति ने अपनी आय y प्राप्त कर ली है, हम यह मान लेते हैं कि पूरी राशि (आय) स्वतः ही ऋणपत्र (या किसी भी ब्याज अर्जित करने वाली जमा राशि) में निवेश की जाती है।

पहले अंतराल की व्यय आवश्यकता के लिए व्यक्ति ऋणपत्र से नकद में $\frac{y}{n}$ राशि का आदान–प्रदान करना चाहता है और $(y - \frac{y}{n})$ ऋणपत्रों के रूप में बना रहता है। अतएव, पहले अंतराल के लिए y का $\frac{1}{n}$ प्रतिशत नकद में और y का $1 - \frac{1}{n} = \frac{n-1}{n}$ प्रतिशत ऋणपत्रों के रूप में रखा जाता है।

उक्त T दिवसों की अवधि के लिए व्यक्ति का मुद्रा धारण करने का प्रतिमान चित्र 8.1 में दर्शाया गया है।

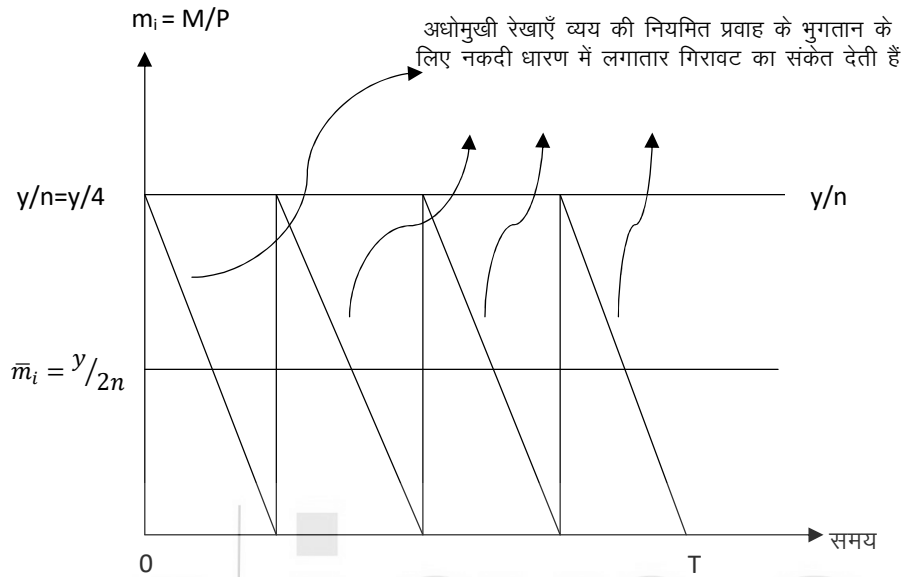

चित्र 8.1: बॉमोल–टोबिन मॉडल में नकद प्रबंधन

चित्र 8.1 में हमने समयावधि को n (यहाँ, n = 4) उप–आवर्त (अंतराल) में विभाजित किया है। प्रत्येक उप–आवर्त की दीर्घता T/n दिवस है। अतः, लेन–देन संख्या 4 है। प्रत्येक उप–आवर्त के आरंभ में व्यक्ति y/n राशि को ऋणपत्र से नकद में परिवर्तित करता है। उप–आवर्त के आरंभ में व्यक्ति के पास नकद शेष राशि y/n (= y/4 आरेख में) है। प्रत्येक उप–आवर्त के अंत में, जैसे ही व्यक्ति उस अवधि के व्यय के लिए भुगतान करने के लिए राशि y/n = y/4 समाप्त कर देता है, उसका वास्तविक शेष शून्य हो जाता है (अधोमुखी रेखा पर ध्यान दें, जो कि उप–आवर्त पर घटते नकद शेष को इंगित करती है)। व्यक्ति की औसत वास्तविक शेष राशि $(\bar{m}_i)$ है (जो कि अंतराल के आरंभ में मुद्रा धारण करने और अंतराल के अंत में मुद्रा धारण करने का औसत है)। चित्र 8.1 के लिए हम पाते हैं कि $\bar{m}_i = \frac{(\frac{y}{n}+0)}{2} = \frac{y}{2n}$ होता है।

8.2.2 लेन–देन की इष्टतम संख्या

चित्र 8.1 में हम यह मानकर चलते हैं कि लेन–देन चार बार किया गया। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या किसी व्यक्ति के लिए लेन–देन की कोई इष्टतम संख्या होती है? वस्तुतः किसी भी व्यक्ति के लिए लेन–देन की इष्टतम संख्या निर्धारित करना एक समस्या हो सकती है। हम जानते हैं कि कोई भी विवेकशील व्यक्ति ऋणपत्र को नकदी में बदलने की लागत को न्यूनतम करेगा। इस रूपांतरण की लागत में दो घटक होते हैं – दलाली लागत, और छोड़ी गई ब्याज आय।

आइए, अब उपर्युक्त दोनों को विस्तार से जानते हैं।

(i) दलाली लागत

प्रत्येक लेन–देन में, व्यक्ति $\frac{y}{n}$ राशि को नकद में परिवर्तित करेगा। यदि ' b' प्रति लेन–देन दलाली शुल्क हो और n लेन–देन की कुल संख्या हो तो समस्त समयावधि की कुल लेन–देन लागत n.b होगी।

(ii) छोड़ी गई ब्याज आय

यदि मुद्रा ऋणपत्रों के रूप में रखा जाता है तो उस पर r की दर से ब्याज मिलेगा। दूसरी ओर, यदि मुद्रा को नकद के रूप में रखा जाता है तो ब्याज की आय का नुकसान होता है। प्रत्येक अंतराल की व्यय आवश्यकता $\frac{y}{n}$ है और प्रत्येक अंतराल की दीर्घता $\frac{T}{n}$ दिवस है। आइए, प्रत्येक उप–आवर्त के लिए छोड़ दी गई ब्याज की आय ज्ञात करें।

पहले अंतराल की ब्याज लागत : हम जानते हैं कि नकदी की राशि $\frac{y}{n}$ ऋणपत्रों से परिवर्तित हो गई है। यह पूरी अवधि के लिए, यानी T दिवसों के लिए ऋणपत्रों के रूप में बनी रह सकती थी। अतः उस राशि पर छोड़ा गया ब्याज $\frac{r.T.y}{n}$ होगा।

दूसरे अंतराल की ब्याज लागत : याद रखें कि दूसरे अंतराल में फिर से नकद राशि $\frac{y}{n}$ को ऋणपत्र से नकदी में परिवर्तित किया जा रहा है। यह नकदी अवधि (T – पहले अंतराल की दीर्घता), यथा, $(T - \frac{T}{n}) = T\,(\frac{n-1}{n})$ दिवसों के लिए ऋणपत्र के रूप में रह सकती थी। अतः उस राशि पर छोड़ी गई ब्याज राशि $r.\frac{T\,(n-1)}{n}.\frac{y}{n}$ होगी।

तीसरे अंतराल की ब्याज लागत : तीसरे अंतराल के लिए छोड़ा गया ब्याज $r.\frac{T(n-2)}{n}.\frac{y}{n}$ है।

nवें अंतराल की ब्याज लागत : यहाँ मुद्रा की $\frac{y}{n}$ राशि $[\,T - \frac{(n-1).T}{n}] = \frac{T}{n}$ दिवसों के लिए ऋणपत्र के रूप में रह सकती थी। अतः छोड़ा गया ब्याज $= \frac{r.T.y}{n.n}$ होगा।

यदि हम उपर्युक्त सभी को जोड़ दें तो हमें छोड़ी गई कुल ब्याज आय प्राप्त होती है, जो कि निम्नवत् दर्शाई जा सकती है –

$$[\,\frac{r.T.y}{n} + \frac{r.T.(n-1).y}{n.n} + \frac{r.T.(n-2).y}{n.n} + \cdots + \frac{r.T.y}{n.n}\,]$$

$$= \frac{r.T.y}{n^2}[n + (n-1) + (n-2) + \cdots + 1]$$

$$= \frac{r.T.y}{n^2}.\frac{n(n+1)}{2}$$

$$= \frac{r.T.y}{2}.(1 + \frac{1}{n}) \qquad \ldots (8.1)$$

उक्त अवधि की कुल लेन–देन लागत (TC) = दलाली लागत + कुल छोड़ी गई ब्याज आय

$$\text{TC} = n.b + \frac{r.T.y}{2}.(1 + \frac{1}{n}) \qquad \ldots (8.2)$$

अब लेन–देन की इष्टतम संख्या ज्ञात करने के लिए हमें n के संबंध में TC का पहला अवकलज लेना चाहिए और इसे शून्य के बराबर करना चाहिए क्योंकि व्यक्ति कुल लागत को न्यूनतम करने का प्रयास करेगा। इस प्रकार, हमें प्राप्त होता है –

$$\frac{\partial TC}{\partial n} = b - \frac{r.T.y}{2.n^2} = 0 \qquad \ldots (8.3)$$

चर 'n' का मान ज्ञात करके हमें प्राप्त होता है –

$$n = \sqrt{\frac{r.T.y}{2.b}} \qquad \ldots (8.4)$$

इस प्रकार, लेन–देन की इष्टतम संख्या r, T एवं y के साथ बढ़ती है और दलाली शुल्क b के साथ घट जाती है। यही है प्रसिद्ध बॉमोल–टोबिन का 'वर्गमूल सूत्र'।

8.2.3 कुल मुद्रा माँग

अब हमें ज्ञात है कि व्यक्तिगत अभिकर्ता की औसत मुद्रा माँग $\bar{m}_i = y / 2n$ (देखें चित्र 8. 1) है।

उपर्युक्त में समीकरण (8.4) से लेन–देन की इष्टतम संख्या के मान को प्रतिस्थापित करने पर हमें प्राप्त होता है –

$$\bar{m}_i = \sqrt{\frac{b.y}{2.r.T}} \qquad \ldots (8.5)$$

जब कोई व्यक्तिगत अभिकर्ता आवधिक रूप से ऋणपत्र को नकदी में परिवर्तित करता रहता है तो बाजार के दूसरी ओर कोई ऐसी फर्म भी होनी चाहिए जिसका मुद्रा ऋणपत्रों में परिवर्तित हो गया हो। अतएव, प्रतिनिधि अभिकर्ता का ऋणपत्र और नकदी धारण फर्म के नकदी और ऋणपत्र धारण को प्रतिबिम्ब की भाँति दर्शाएगा। इसका तात्पर्य यह है कि फर्म का औसत नकद धारण भी समीकरण (8.4) में दिए गए वर्गमूल नियम द्वारा दर्शाया जाएगा।

यह स्पष्टीकरण हमें केवल समीकरण (8.5) को दोगुना करके कुल मुद्रा माँग फलन प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। तदनुसार,

$$\frac{M}{P} = 2.\overline{m_i} = 2.\sqrt{\frac{by}{2r}} = \sqrt{\frac{4by}{2rT}} = \sqrt{\frac{2by}{rT}} \qquad \ldots (8.6)$$

समीकरण (8.6) के आधार पर दिए गए कुल मुद्रा माँग फलन की विशेषताओं को निम्नानुसार संक्षेपित किया जा सकता है –

$$\frac{M}{P} = m(r, y)\ ;\ \frac{\partial m}{\partial r} < 0, \frac{\partial m}{\partial y} > 0 \qquad \ldots (8.7)$$

आप देखेंगे कि मुद्रा माँग की ब्याज लोचता $[= \frac{\partial \frac{M}{P}}{\partial r} . \frac{r}{\frac{M}{P}}]$ की गणना $(-)\frac{1}{2}$ के रूप में की जाती है। इस प्रकार, मुद्रा की माँग ब्याज–संवेदनशील होती है, भले ही मुद्रा की समस्त माँग लेन–देन प्रकार की हो। मुद्रा की प्रत्याशित या सट्टा माँग की विद्यमानता आगे 'ब्याज दर के प्रति मुद्रा माँग की संवेदनशीलता' को बढ़ा देती है।

8.2.4 बॉमोल–टोबिन मॉडल की सीमाएँ

ऊपर चर्चा किए गए बॉमोल–टोबिन मॉडल में हम यह मानकर चले थे कि आय एक समयावधि में एक बार ही प्राप्त होती है जबकि व्यय बार–बार और नियमित रूप से होता है। अतः, कोई भी आर्थिक अभिकर्ता प्राप्तियों अथवा आय को ऋणपत्रों के रूप में रखता है और इसे समय–समय पर नकदी में परिवर्तित करता रहता है। बहरहाल, इस मॉडल की कुछ सीमाएँ अथवा कमियाँ भी देखने में आती हैं, जो कि निम्नवत् हैं –

(i) व्यय भुगतान का पूरी तरह से पूर्वाभास नहीं हो सकता है और न ही इसे समान रूप से वितरित एवं निरंतर माना जा सकता है। यह आकारहीन और अप्रत्याशित ही हो सकता है।

(ii) बॉमोल–टोबिन का मॉडल मुद्रा की लेन–देन की माँग पर आधारित है। यह इस तथ्य की अनदेखी करता है कि ऋणपत्र की कीमतों में बदलाव से नकदी की माँग पर असर पड़ सकता है।

(iii) नकदी को किसी भी प्रकार से एकमात्र परिसंपत्ति नहीं माना जा सकता जिसमें लेन–देन की शेष राशि रखी जाए, जैसा कि उक्त मॉडल में माना गया है।

(iv) यदि आय और व्यय की प्राप्तियाँ समय और राशि के लिहाज से मेल खाती हों तो यह वास्तविक शेष राशि की शून्य माँग होगी।

(v) यह अंतर्निहित अवधारणा कि दलाली शुल्क स्थिर रहेगा, प्रश्न योग्य है।

बोध प्रश्न 1

1) यदि अधिकांश लेन–देन ऑनलाइन भुगतान के माध्यम से किया जाता हो तो क्या आप फिर भी दैनिक लेन–देन की जरूरतों को पूरा करने के लिए कुछ नकदी रखने के इच्छुक होंगे? अपने उत्तर के समर्थन में औचित्य दीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) यदि r = 10:, मूल्य स्तर = 1, व्यक्ति की आय = रु. 30,000 प्रति माह और दलाली लागत = रु. 5000 प्रति लेन–देन हो तो बॉमोल–टोबिन मॉडल में किसी व्यक्ति के लिए लेन–देन की इष्टतम संख्या ज्ञात कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3) यदि क्रेडिट कार्ड धोखाधड़ी के मामलों में तेजी से वृद्धि होती है तो मुद्रा की लेन–देन माँग पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा? समझाएँ।

.....

.....

.....

.....

8.3 निवेश –सूची सिद्धांत

कीन्स के तरलता अधिमान सिद्धांत का दावा है कि लोगों की निवेश–सूची में मुद्रा अथवा ऋणपत्र शामिल होते हैं। सामान्य तौर पर, व्यक्ति अनेक परिसंपत्तियों से युक्त निवेश सूची रखते हैं। तदनुसार, निवेश–सूची मे विविधता देखी जाती हैं। यह देखा गया है कि जोखिम युक्त परिसंपत्तियाँ अधिक लाभ अर्जित करती हैं। अतः, कोई व्यक्ति जो जोखिम और लाभ दोनों से सरोकार रखता हो, उसकी निवेश सूची में ऋणपत्र और मुद्रा दोनों का मिश्रण होता है।

8.3.1 निवेश–सूची संतुलन दृष्टिकोण

जेम्स टोबिन द्वारा प्रस्तुत निवेश–सूची सिद्धांत ने विशेष रूप से मुद्रा के एक विशेष कार्य पर जोर दिया, यथा, मूल्य संचय के रूप में मुद्रा। कोई भी व्यक्तिगत निवेशक अपनी कुल संपत्ति (W) को ऋणपत्रों (B) और मुद्रा (M) के रूप में रखता है। उसके निवेश का संग्रह (यथा, उनकी निवेश सूची) को निम्नवत् दर्शाया जाता है –

$$W = M + B \qquad \ldots (8.8)$$

यहाँ मुद्रा का मात्रिक मूल्य वही रहता है क्योंकि इससे कोई लाभ नहीं मिलता है; परंतु अपनी सुरक्षा और तरलता के कारण यह सुविधाजनक रहता है। चलिए, मान लेते हैं कि ऋणपत्रों पर निवेशित मुद्रा की 1 इकाई से प्रत्याशित लाभ '$\bar{e}$' है।

यह लाभ ब्याज की बाजार दर (r, जो कि ऋणपत्र की प्रत्येक इकाई पर अर्जित होता है और यह कोई अनिश्चितता नहीं है) तथा पूँजीगत लाभ की प्रत्याशित प्रतिशत दर ($\bar{g}$) से आता है। ऐसी संभावना होती है कि ऋणपत्र की कीमत ऊपर अथवा नीचे चली जाए। अतः निवेशक पूँजीगत लाभ के विषय में कुछ भी निश्चित नहीं कह सकता है। वह औसत पूँजीगत लाभ, जो कि $\bar{g}$ है, की प्रत्याशा मात्र ही कर सकता है। इस प्रकार, ऋणपत्र से उसके कुल प्रत्याशित लाभ में दो घटक शामिल होंगे –

(i) ब्याज (r) जो कि निश्चित है, और
(ii) पूँजीगत लाभ (g) जो कि अनिश्चित है।

निवेशक 'g' के विषय में अनिश्चितता रखते हैं, परंतु औसत प्रत्याशित लाभ $\bar{g}$ के आसपास इन लाभों का एक अंतर्निहित सामान्य वितरण दिखाई देता है। तदनुसार,

$$\bar{e} = r + \bar{g} \qquad \ldots (8.9)$$

चूँकि ऋणपत्र जोखिम युक्त होते हैं, हम मानक विचलन σ_g को जोखिम के स्वाभाविक मापदंड के रूप में लेते हैं। इसका अर्थ है कि किसी भी निवेशक के पास 0.67 (मानक सामान्य वितरण के गुणधर्मों की जाँच कर लें) की प्रायिकता यह होती है कि g का मान $(\bar{g} - \sigma_g)$ और $(\bar{g} + \sigma_g)$ के बीच ही रहेगा। अब चूँकि कुल ऋणपत्र संपत्ति B है, प्रत्याशित लाभ ($\bar{R}_T$) निम्नवत् होगा –

$$\bar{R}_T = B \cdot \bar{e} = B \cdot (r + \bar{g}) \qquad \ldots (8.10)$$

यहाँ 'r' एक ज्ञात मूल्य है, जो कि कम से कम तो ऋणपत्र बाजार द्वारा व्यक्ति के लिए तय ही है। अब राशि 'B' के ऋणपत्र धारण का कुल जोखिम निम्नवत् होगा –

$$\sigma_T = B \cdot \sigma_g \qquad \ldots (8.11)$$

सहज ज्ञान से, ऋणपत्र में रखे गए व्यक्ति के मुद्रा का अनुपात जितना अधिक होगा उतना ही अधिक उसे लाभ होगा, परंतु उसका जोखिम भी अधिक ही होगा। गणितीय रूप से, उक्त अंतर्ज्ञान को हम एक ठोस रूप दे सकते हैं। इस रूप को समीकरण (8.11) से हम निम्नवत् लिख सकते हैं –

$$B = \frac{\sigma_T}{\sigma_g} \qquad \ldots (8.12)$$

समीकरण (8.10) में उपर्युक्त मान रखकर हमें प्राप्त होता है –

$$\bar{R}_T = \sigma_T \left(\frac{r + \bar{g}}{\sigma_g}\right) \qquad \ldots (8.13)$$

अवसर बिन्दुपथ (OC) का ढलान निम्नवत् दर्शायी जाती है –

$$\frac{d\bar{R}_T}{d\sigma_T} = \frac{r + \bar{g}}{\sigma_g} \qquad \ldots (8.14)$$

इनमें से r को छोड़कर प्रत्येक पद प्रत्येक व्यक्ति के लिए निश्चित है।

आइए, अब चित्र 8.2 में समीकरण (8.13) का प्रांकन करते हैं। इस चित्र के ऊपरी खंड में हम y–अक्ष पर ऋणपत्र संपत्ति से प्रत्याशित लाभ $\bar{R}_T$ और x–अक्ष पर कुल जोखिम σ_T को मापते हैं। याद रखें कि यदि व्यक्ति अधिक ऋणपत्र रखता है तो प्रत्याशित लाभ ($\bar{R}_T$) बढ़ता है। साथ ही, यदि व्यक्ति अधिक ऋणपत्र रखता है तो जोखिम भी बढ़ जाता है।

इस प्रकार, मूल '0' पर लाभ और जोखिम दोनों शून्य होते हैं (इसका अर्थ है कि यह व्यक्ति अपनी सारी संपत्ति नकद मुद्रा के रूप में रखता है)। जैसे–जैसे इस व्यक्ति का ऋणपत्र संपत्ति बढ़ता है, उसके लाभ के साथ–साथ उसका जोखिम भी बढ़ता है। इसीलिए OC रेखा धनात्मक ढलान दर्शाती है।

इसके अलावा, यहाँ एक समझौताकारी समन्वय भी दिखाई देता है, यथा – अधिक ऋणपत्रों का अर्थ होगा अधिक लाभ, और अधिक नकद मुद्रा का अर्थ होगा कम प्रतिफल। प्रत्याशित प्रतिलाभ $\bar{R}_T$ और कुल जोखिम σ_T के बीच यह समझौताकारी समन्वय *अवसर बिन्दुपथ* OC द्वारा दर्शाया जाता है।

चूँकि हम मानकर चलते हैं कि समझौताकारी समन्वय की दर स्थिर है, 'अवसर बिन्दुपथ' एक सीधी रेखा होता है। यह निवेशक ही तय करता है कि किस बिंदु पर उसका जोखिम इष्टतम (OC वक्र पर) होगा। यदि वह जोखिम से बचने वाला है तो वह मूलबिंदु के ओर अधिक प्रवणता दर्शाएगा। यदि वह जोखिम प्रेमी है तो वह मूलबिंदु से बहुत दूर होगा।

आप देखेंगे कि जब ब्याज दर में परिवर्तन होता है तो OC वक्र खिसकता है। जब ब्याज दर r_1 होती है तो रेखा OC_1 अवसर बिंदुपथ हो जाती है। जैसे–जैसे ब्याज की बाजार दर बढ़ती है, रेखा की ढलान बढ़ती ही जाती है और व्यक्ति का अवसर बिंदुपथ क्रमशः $r_1 < r_2 < r_3$ ब्याज की अलग–अलग दरों के अनुरूप OC_1 से OC_2 से OC_3 में बदल जाता है।

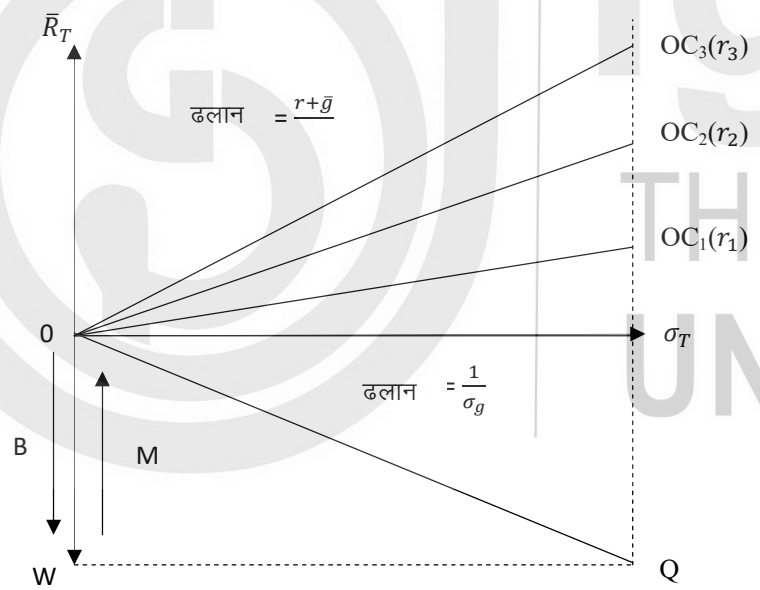

चित्र 8.2: जोखिम और प्रतिफल के बीच समझौताकारी समन्वय

चित्र 8.2 के निचले खंड में जोखिम और ऋणपत्रों में निवेश के बीच संबंध को रेखा OQ (समीकरण 8.12 से) द्वारा दर्शाया गया है। इसी खंड में ऊर्ध्वाधर अक्ष की लंबाई व्यक्ति की निश्चित तरल संपत्ति W द्वारा दर्शायी गई है। यहीं y–अक्ष के साथ मूलबिंदु से दूरी कुल ऋणपत्र संपत्ति (B), और कुल मुद्रा बिंदु (W) से y–अक्ष के साथ–साथ मूलबिंदु '0' तक दूरी कुल मुद्रा संपत्ति (M) भी दर्शाए गए हैं। रेखा OQ का ढलान समीकरण (8.12) से $\frac{1}{\sigma_g}$ है। रेखा OQ हमें σ_T के किसी भी दिए गए स्तर के लिए निवेशक की निवेश–सूची में ऋणपत्र (B) और मुद्रा (M) का संयोजन खोजने में मदद करती है।

8.3.2 निवेशक का जोखिम अधिमान और इष्टतम निवेश–सूची आवंटन

कोई भी निवेशक जोखिम और लाभ पर इष्टतमीकरण करता है। आइए, हम B (ऋणपत्र) और M (नकद मुद्रा) के इष्टतम निवेश–सूची मिश्रण का पता लगाते हैं। व्यक्ति के इष्टतम जोखिम–लाभ संयोजन का पता लगाने के लिए हमें उसके उपयोगिता फलन $U = f(\bar{R}_T, \sigma_T)$ को जानना होगा। चर ($\bar{R}_T$ में वृद्धि से उपयोगिता में वृद्धि होती है जबकि चर σ_T में वृद्धि से उपयोगिता घट जाती है। हम इस उपयोगिता फलन को उदासीनता वक्रों (IC) के रूप में व्यक्त कर सकते हैं, जैसे कि एक उच्चतर IC उपयोगिता के उच्चतर स्तर (देखें चित्र 8.3) को ही इंगित करता है। चित्र 8.3 में तीन अनधिमान वक्र दर्शाए गए हैं।

टोबिन ने मोटे तौर पर दो प्रकार के निवेशकों में अंतर स्पष्ट किया, यथा –

(i) *जोखिम प्रेमी,* और

(ii) *जोखिम अपवर्जक*।

जोखिम प्रेमी ऐसे व्यक्ति होते हैं जो असामान्यतः उच्च पूँजीगत लाभ का अवसर पाने के लिए कम प्रत्याशित लाभ स्वीकार करने को सदा तैयार रहते हैं। वे उच्च जोखिम पसंद करते हैं। उनके अनधिमान वक्र मूलबिंदु के प्रति अवतल होते हैं। दूसरी ओर, जोखिम अपवर्जक अर्थात् जोखिम टालने वाले उच्च जोखिम को तब तक स्वीकार नहीं करते जब तक कि उन्हें क्षतिपूर्ति नहीं दी जाती और वे उच्चतर प्रत्याशित लाभ से संतुष्ट नहीं हो जाते।

आनुभाविक रूप से यह देखा गया है कि अधिकांश निवेशक जोखिम से बचने वाले होते हैं। उनके अनधिमान वक्र मूलबिंदु के प्रति उत्तल होते हैं। आगे हम अपना विश्लेषण चित्र 8.3 में जोखिम टालने वालों के इष्टतम निवेश–सूची आवंटन का पता लगाने पर केंद्रित करेंगे।

चलिए, हम उस स्थिति से आरंभ करते हैं जब ब्याज दर r_0 है और अनधिमान वक्र IC_0 (देखें चित्र 8.3 का ऊपरी खंड) है। यहाँ निवेशक संतुलन बिंदु पर है, जहाँ रेखा OC_0 रेखा IC_0 की स्पर्शरेखा है। तदनुसार, निवेशक ऋणपत्रों की OB_0 राशि और नकद मुद्रा की B_0W राशि (देखें चित्र 8.3 का निचला खंड) का धारण करेगा। यही निवेशक का **इष्टतम निवेश–सूची आवंटन** कहलाता है।

मान लीजिए कि ब्याज दर में r_1 की वृद्धि हुई है। अब निवेशक अधिक जोखिम लेने को तैयार होगा क्योंकि अब लाभ अधिक है। निवेशक IC_2 द्वारा दर्शायी गई उच्च स्तर की उपयोगिता भी प्राप्त कर सकता है। साम्यावस्था की स्थिति उस बिंदु से दी जाती है जहाँ रेखा OC_1 रेखा IC_1 की स्पर्शरेखा होती है। इसे चित्र 8.3 के निचले खंड में देखें। निवेशक का इष्टतम निवेश–सूची आवंटन OB_1 से और मुद्रा का इष्टतम निवेश–सूची आवंटन B_1W से दर्शाया जाता है।

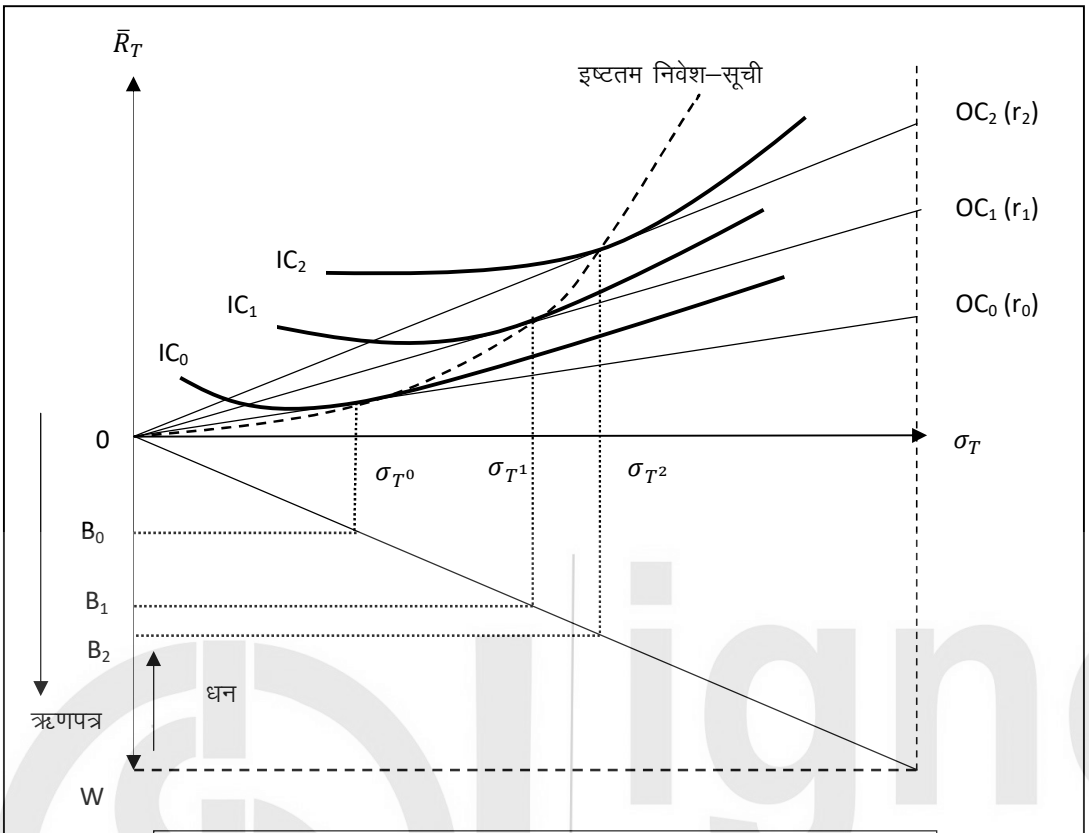

चित्र 8.3: जैसे–जैसे ब्याज दर बढ़ती है, विविधीकरण करने वाले अपनी इष्टतम निवेश सूची को अधिक ऋणपत्रों और कम नकद मुद्रा की दिशा में बदलते हैं।

8.3.3 कुल मुद्रा माँग की ब्याज–दर संवेदनशीलता

निवेशक के ऋणपत्रों और नकद मुद्रा के बीच तरल पूँजी के आवंटन में बदलावों को देखकर कुल मुद्रा माँग वक्र को चित्र 8.3 से अवकलित किया जा सकता है। जैसे–जैसे निरंतर वृद्धि से चर r बढ़ता है (r_0, r_1, r_2), अवसर बिंदुपथ रेखाएँ अपना ढलान बढ़ाती हुई ऊपर की ओर घूम जाती हैं (OC_0, OC_1, OC_2) जहाँ वे आनुक्रमिक उच्चतर अनधिमान वक्रों (IC_0, IC_1, IC_2) को स्पर्श करती हैं।

उपयोगिता वक्र और अवसर बिंदुपथ के बीच आनुक्रमिक स्पर्शरेखा बिंदुओं का मिलाने से हमें इष्टतम निवेश–सूची वक्र (बिंदुयुक्त रेखा) प्राप्त होता है। आप देखेंगे कि चर r में निरंतर समान वृद्धि के कारण हमें ऋणपत्रों (B_0, B_1, B_2) में रखे गए मुद्रा (स्थिर) की राशि थोड़ी–थोड़ी बढ़कर प्राप्त होती रहती है।

चूँकि W स्थिर है और $W = B + M$, हम इसके विपरीत यह भी कह सकते हैं कि चर r में निरंतर समान वृद्धि के लिए निवेशक को M की राशि में थोड़ी–थोड़ी कमी करते रहना चाहिए।

उदाहरण : एक जोखिम से बचने वाले निवेशक के लिए मान लीजिए कि W = 100 है। उसका निवेश–सूची आवंटन निम्नलिखित तालिका द्वारा दर्शाया गया है –

ब्याज दर	ऋणपत्र धारण (B)	नकद मुद्रा (M)	वास्तविक मुद्रा धारण (M/P)
r_0	50	50	$50/P_0$
r_1	60	40	$40/P_0$
r_2	65	35	$35/P_0$
r_3	67	33	$33/P_0$

उपर्युक्त काल्पनिक उदाहरण में हम यह मानकर चलते हैं कि मूल्य स्तर P_0 पर अपरिवर्तित रहता है। हमने चित्र 8.4 में वास्तविक मुद्रा धारण और ब्याज दर का प्रांकन किया है। यह हमें *कुल मुद्रा माँग वक्र* देता है। याद रखें कि हम आय को Y_0 पर स्थिर मानकर चले थे।

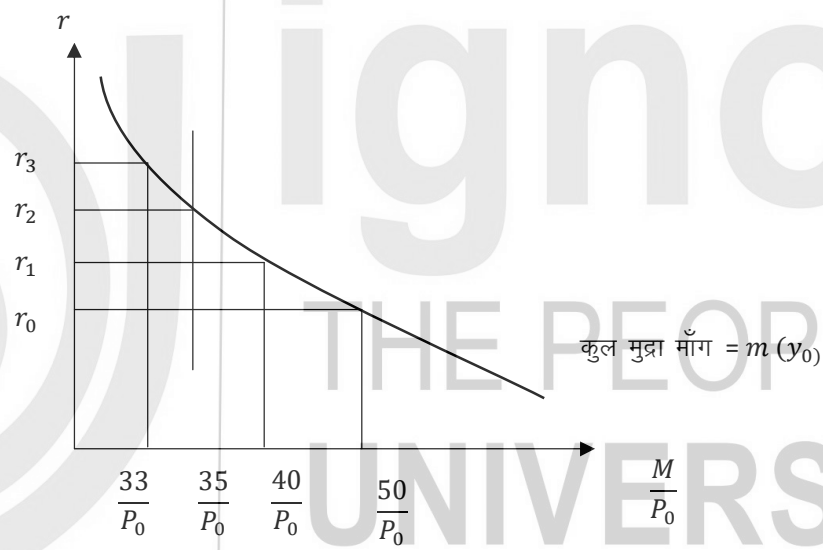

चित्र 8.4: मुद्रा माँग फलन

चित्र 8.4 में आरेखित मुद्रा माँग फलन और कुछ नहीं, मुद्रा की प्रत्याशित या सट्टा माँग ही है। यह फलन ब्याज दर के आधार पर ऋणपत्र व नकद मुद्रा में स्थिर मुद्रा के इष्टतम आवंटन, और पूँजीगत लाभ पर प्रत्याशित जोखिम एवं लाभ का विश्लेषण करता है। इस मॉडल में मुद्रा की लेन–देन माँग के संबंध में कोई संदर्भ नहीं दिया गया है।

8.3.4 पूँजीगत लाभ के प्रायिकता वितरण का महत्व

ऋणपत्र धारण के जोखिम संबंधी निवेशक के अनुमान σ_g व्यक्तिपरक हैं। पूँजीगत लाभ के प्रायिकता वितरण का मानक विचलन σ_g निवेशक की अवधारणा, बाजार का अनुभव, अनिश्चितता, राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति के उपाय, आदि से प्रभावित होता है।

केन्द्रीय बैंक की नीति (जैसे मुक्त बाजार संक्रियाएँ) निवेशकों के अनुमानित जोखिम को प्रभावित कर सकती है। पूँजीगत लाभ और ब्याज आय पर कर की दर निवेशक के

अनुमानित जोखिम और लाभ की गणना को प्रभावित करती है। इस प्रकार, निवेशक के मुद्रा के इष्टतम आवंटन पर σ_g में परिवर्तन के प्रभाव का पता लगाना आवश्यक होता है।

चर σ_g में कोई भी वृद्धि रेखा OC और रेखा OQ दोनों के ढलान को प्रभावित करती है (देखें चित्र 8.2)। जबकि रेखा OC नीचे की ओर घूमेगी, रेखा OQ ऊपर की ओर घूमेगी। इसका तर्क एकदम सरल है। जब ऋणपत्रों में निवेश का जोखिम बढ़ जाता है तो निवेशक ऋणपत्र धारण का कुल जोखिम घटाना पसंद करेंगे (σ_T को घटाने की इच्छा)। अतः निवेशक B पर कटौती करेगा।

पूँजीगत लाभ $\bar{g}$ में वृद्धि का प्रभाव ब्याज दर में वृद्धि के समान ही होगा। किसी भी ज्ञात ब्याज दर के लिए पूँजीगत लाभ में वृद्धि से ऋणपत्र के लिए निवेशक की प्राथमिकता बढ़ेगी और उसकी मुद्रा माँग में कमी आएगी। इस प्रकार, मुद्रा माँग वक्र नीचे की ओर खिसकेगा। जब निवेशक की निवेश–सूची में ऋणपत्र और नकद मुद्रा दोनों होते हैं तो मुद्रा की प्रत्याशित माँग को समझाने के लिए टोबिन का माल–सूची संतुलन दृष्टिकोण कहीं अधिक यथार्थवादी विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

बोध प्रश्न 2

1) एक रु. 100 मूल्य का ऋणपत्र रु. 6 का लाभ देता है। शीघ्र ही ऋणपत्र की कीमत बढ़कर रु. 120 हो जाती है। यह ऋणपत्र जोखिम युक्त है; जितना अधिक जोखिम उतना ही अधिक लाभ। औसत प्रत्याशित पूँजीगत लाभ 15% है और परिसंपत्ति धारक के लिए 66.7% संभावना है कि वास्तविक पूँजीगत लाभ 11% और 19% के बीच रहेगा। इस मामले में जोखिम में एक प्रतिशतता बिंदु की वृद्धि निवेशक के प्रत्याशित कुल लाभ में कितनी वृद्धि लेकर आएगी?

.....

.....

.....

.....

.....

2) मान लीजिए कि बाजार में दो प्रकार के ऋणपत्र उपलब्ध हैं। यद्यपि दोनों ही प्रकार के ऋणपत्रों का औसत प्रत्याशित लाभ एक समान है, एक के पास दूसरे की तुलना में अधिक σ_g है। अब निवेशक द्वारा किसे प्राथमिकता दी जाएगी?

.....

.....

.....

.....

.....

8.4 फ्रीडमैन का मुद्रा माँग दृष्टिकोण

मिल्टन फ्रीडमैन ने अपने निबंध (1956) ''द क्वांटिटी थ्योरी ऑफ मनी – ए रिस्टेटमेंट'' में मुद्रा के मात्रात्मक सिद्धांत को पुनर्सूत्रित किया। उसने मुद्रा को एक प्रकार की परिसंपत्ति के रूप में लिया। परिवार, फर्म और सरकार जैसे आर्थिक अभिकर्ता अपनी

संपत्ति का कुछ हिस्सा नकद मुद्रा के रूप में रखना चाहते हैं। इस प्रकार, नकद मुद्रा एक परिसंपत्ति या पूँजी है, जो कि सकारात्मक लाभ देता है। अतः, फ्रीडमैन का मुद्रा माँग सिद्धांत अनिवार्यतः मुद्रा सिद्धांत का ही एक हिस्सा है। फ्रीडमैन ने स्थायी आय को मुद्रा के ही प्रतिनिधि के रूप में लिया है।

8.4.1 मुद्रा माँग फलन

संपत्ति को पाँच अलग–अलग रूपों में देखा जा सकता है, यथा –

(i) नकद मुद्रा,
(ii) ऋणपत्र,
(iii) इक्विटी,
(iv) भौतिक वस्तुएँ, और
(v) मानव पूँजी।

संपत्ति के प्रत्येक रूप में अद्वितीय विशेषताएँ होती हैं। संपत्ति का प्रत्येक रूप कुछ न कुछ निश्चित प्रतिफल अवश्य देता है। पहले चार रूपों को *गैर–मानव पूँजी* के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है, जबकि पाँचवाँ *मानव पूँजी* है। गैर–मानव पूँजी को आसानी से मुद्रा में परिवर्तित किया जा सकता है।

मानव पूँजी (यह शिक्षा, कौशल अथवा उत्तम स्वास्थ्य जैसी मनुष्य की आय अर्जित करने वाली उत्पादक क्षमता को इंगित करता है) को न तो आसानी से समाप्त किया जा सकता है और न ही इसे मुद्रा उधार लेने के लिए धरोहर के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

फ्रीडमैन के अनुसार मुद्रा की माँग निम्नलिखित चरों पर निर्भर करती है –

(i) **कुल मुद्रा** : किसी व्यक्ति के मुद्रा का कुल संचय उसकी मुद्रा माँग का सबसे महत्वपूर्ण निर्धारक होता है। किसी व्यक्ति का मुद्रा जितना अधिक होगा, वह लेन–देन व अन्य उद्देश्यों के लिए उतनी ही अधिक मुद्रा की माँग करेगा। किसी व्यक्ति के कुल मुद्रा का आकलन शायद ही कभी सटीक रूप से उपलब्ध होता है। फ्रीडमैन ने स्थायी आय के रियायती मूल्य (y_p) का प्रयोग मुद्रा के सूचकांक के रूप में किया। स्थायी आय अभिकर्ता के जीवनकाल के दौरान मुद्रा से कुल प्रत्याशित लाभ को कहा जाता है।

(ii) **मानव पूँजी और गैर–मानव पूँजी अनुपात** : जिस अनुपात (w) में अभिकर्ता के मुद्रा (स्थायी आय) को परिसंपत्ति के इन दो रूपों के बीच विभाजित किया जाता है, वह मुद्रा की माँग को वास्तविकता पदों में निर्धारित करने का एक महत्वपूर्ण कारक होता है। फ्रीडमैन ने अपनी *स्थायी आय परिकल्पना* में मानव मुद्रा से अपेक्षाकृत कम सीमांत उपभोग प्रवृति (MPC) का सुझाव दिया। इसके कारण, यद्यपि मानव पूँजी और गैर–मानव पूँजी का अनुपात प्रासंगिक बना रहता है, यह फ्रीडमैन के सिद्धांत में कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभाता।

(iii) **मुद्रा व अन्य वित्तीय परिसंपत्तियों पर लाभ की प्रत्याशित दर** : मुद्रा की माँग संबंधी अन्य सिद्धांतों से भिन्न, फ्रीडमैन मुद्रा की व्यापक परिभाषा लेता है। तदनुसार, वह इसमें माँग जमा और करेंसी के साथ–साथ सावधि जमा को भी शामिल करता है। अतः, मुद्रा भी परिसंपत्ति के अन्य रूपों की भाँति प्रत्याशित मात्रिक लाभ (R_m) देता है। चूँकि किसी भी व्यक्ति की स्थायी आय स्थिर होती है, उसका मुद्रा (जो स्थायी आय द्वारा स्थानापन्न किया जाता है) भी स्थिर होता है। इस स्थिर मुद्रा से अपना हिस्सा निकालने के लिए मुद्रा व अन्य वित्तीय परिसंपत्ति एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करती रहती हैं। इस प्रकार, मुद्रा की माँग मुद्रा के सापेक्ष अन्य परिसंपत्तियों (ऋणपत्रः ($R_b - R_m$), इक्विटीजः

$(R_e - R_m)$) के धारण हेतु प्रोत्साहनों पर निर्भर करती है। यदि वित्तीय परिसंपत्तियों (ऋणपत्र एवं इक्विटीज) पर लाभ मुद्रा की तुलना में कम हो जाता है तो व्यक्तिगत अभिकर्ता अपने पास अधिक मुद्रा रखना चाहेगा।

(iv) **मूल्य और प्रत्याशित मुद्रास्फीति** : मुद्रास्फीति के कारण बढ़ते कीमत स्तर के दो परस्पर विरोधी प्रभाव देखने में आते हैं। मुद्रास्फीति मुद्रा की क्रय शक्ति (मात्रिक पदों में) को नष्ट कर देती है। ऐसी दशाओं में कोई भी व्यक्ति अपने वास्तविक मुद्रा शेष को स्थिर रखने के लिए उच्चतर मौद्रिक मुद्रा शेष रखना चाहेगा। इसके अलावा, गैर–मानव संपत्ति जैसे कि अचल संपत्ति, सोना, अद्वितीय कलाकृति, आदि पर सापेक्ष प्रतिफल में वृद्धि हो जाती है। यह लोगों को कम मुद्रा रखने के लिए प्रभावित करेगा। इस प्रकार, यह भौतिक वस्तुओं के सापेक्ष लाभ $(\pi^e - R_m)$ पर निर्भर करेगा।

(v) **अन्य चर** : अभिरुचि एवं अधिमान, प्रत्याशित आर्थिक अस्थिरता (वैश्विक वित्तीय संकट, व्यापार चक्र के दौर) और संस्थागत कारक (मजदूरी भुगतान प्रणाली की विधि, बिलों का भुगतान) जैसे चर भी मुद्रा की माँग को प्रभावित करते हैं। इन सभी कारकों को चर (z) के अन्तर्गत दर्शाया जाता है।

अब फ्रीडमैन के मुद्रा माँग फलन को निम्नलिखित रूप में लिखा जा सकता है –

$$\frac{M^d}{P} = \varphi\,(y_p, w, (R_b - R_m), (R_e - R_m), (\pi^e - R_m), z) \qquad \ldots (8.15)$$

उपर्युक्त समीकरण में,

$\frac{M^d}{P}$ = वास्तविक मुद्रा शेष की माँग

y_p = वास्तविक स्थायी आय

w = मानव पूँजी और गैर–मानव पूँजी का अनुपात

R_m = मुद्रा से प्रत्याशित मौद्रिक लाभ

R_b = ऋणपत्रों से प्रत्याशित मौद्रिक लाभ

R_e = इक्विटी से प्रत्याशित मौद्रिक लाभ

π^e = मुद्रास्फीति की प्रत्याशित दर = गैर–वित्तीय वस्तु से प्रत्याशित मात्रिक लाभ हेतु स्थानापन्न

z = कोई भी अन्य चर जो वास्तविक मुद्रा से व्युत्पन्न उपयोगिता को प्रभावित करने की शक्ति रखते हों

फ्रीडमैन के अनुसार, जब स्थायी आय में वृद्धि होती है तो वास्तविक मुद्रा शेष की माँग तब बढ़ जाती है और जब ऋणपत्र, इक्विटी अथवा वस्तु पर प्रत्याशित लाभ मुद्रा पर प्रत्याशित मात्रिक लाभ की तुलना में बढ़ जाता है तो स्थायी आय घट जाती है।

फ्रीडमैन का विचार है कि अर्थव्यवस्था में ब्याज दर में बदलाव से मुद्रा पर प्रत्याशित लाभ के साथ–साथ परिसंपत्तियों के वैकल्पिक रूपों में भी बदलाव आता है। परिणामतः, मुद्रा माँग फलन में प्रोत्साहन पदों $(R_b - R_m,\ R_e - R_m,\ \pi^e - R_m)$, और इसीलिए मुद्रा की माँग में कोई परिवर्तन नहीं देखा जाता है। इस प्रकार, मुद्रा की माँग ब्याज दर के प्रति असंवेदनशील होती है। यह केन्जियन अवधारणा के नितांत विपरीत है।

कीन्स के अनुसार, ब्याज दर मुद्रा की माँग का एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व होती है। यह अंतर कीन्स और फ्रीडमैन द्वारा मानी जाने वाली मुद्रा की परिभाषा में अंतर के कारण

उत्पन्न होता है। कीन्स मुद्रा की एक बहुत ही संकीर्ण परिभाषा लेता है जबकि फ्रीडमैन मुद्रा की एक व्यापक परिभाषा लेता है जिसमें वह माँग जमा के साथ–साथ सावधि जमा (जो कि ब्याज अर्जन होता है) को भी शामिल करता है। जैसे–जैसे ब्याज की दर बढ़ती है, मुद्रा के सावधि जमा घटक की माँग भी बढ़ती है और माँग जमा एवं मुद्रा की माँग गिरती है। अतः, मुद्रा की माँग पर ब्याज दर का कुल प्रभाव नगण्य होता है।

समीकरण (8.15) में बताए गए फ्रीडमैन के मुद्रा माँग फलन का लगभग अनुमान निम्नवत् लगाया जा सकता है –

$$\frac{M^d}{P} = \varphi\,(Y_p) \qquad \ldots (8.16)$$

आप देखेंगे कि मुद्रा की माँग को निर्धारित करने में अपना सापेक्ष महत्व न रखने के कारण w और z जैसे पदों को छोड़ दिया जाता है। फ्रीडमैन का सिद्धांत बताता है कि वास्तविक स्थायी आय ही वास्तविक मुद्रा की माँग का एकमात्र निर्धारक तत्व होती है। किसी व्यक्ति की स्थायी आय कालांतर में काफी स्थिर रहती है क्योंकि यह आय स्तर में कुछ अप्रत्याशित स्थायी परिवर्तनों के कारण ही बदलती है।

इस प्रकार, दूसरा बिंदु जिसमें फ्रीडमैन कीन्स से भिन्न है, वह यह है कि कीन्स के सिद्धांत में प्रत्याशित ब्याज दर में परिवर्तन के कारण मुद्रा की माँग अनिश्चित और अस्थिर होती है, जबकि फ्रीडमैन की वास्तविक मुद्रा की माँग अत्यधिक स्थिर होती है क्योंकि यह स्थिर चर 'स्थायी आय' पर निर्भर होती है। इसका अर्थ यह है कि मुद्रा माँग की मात्रा का अनुमान समीकरण (8.16) में बताए गए मुद्रा फलन की माँग से सटीक रूप से लगाया जा सकता है।

8.4.2 मुद्रा का आय संवेग

फ्रीडमैन के अनुसार, मुद्रा माँग फलन, और इसीलिए मुद्रा का वेग, अत्यधिक पूर्वानुमेय और स्थिर होते हैं। मुद्रा माँग फलन की स्थिरता और मुद्रा के वेग की परिणामी पूर्वानुमेयता वास्तविक वर्तमान आय (= वास्तविक मापी गई आय = y) और वास्तविक स्थायी आय (y^p) के बीच के संबंध से अवकलित की जा सकती है। इसे समीकरण (8.16) में दिए गए मुद्रा माँग फलन को निम्नलिखित रूप में परिवर्तित करके देखा जा सकता है –

$$V = \frac{y}{\frac{M^s}{P}} = \frac{y}{\frac{M^d}{P}} = \frac{y}{\varphi(y^p)} = \text{मुद्रा का वेग (velocity)} \qquad \ldots (8.17)$$

चूँकि वर्तमान आय और स्थायी आय के बीच संबंध काफी स्थिर और पूर्वानुमेय होता है, मुद्रा का वेग भी स्थिर और पूर्वानुमेय होता है, हालाँकि नियत नहीं होता है। फ्रीडमैन ने अपनी 'स्थायी आय परिकल्पना' में वास्तविक स्थायी आय को निम्नानुसार परिभाषित किया है –

$$y^p = \frac{r}{r+1} \sum_{j=0}^{\infty} \frac{y_{t+j}}{(1+r)^j} \qquad \ldots (8.18)$$

यहाँ, r = वास्तविक ब्याज दर और t = समयावधि

तदनुसार, $\frac{r}{(r+1)} < 1.$

अतएव, वास्तविक स्थायी आय वर्तमान मापी गई आय से कम होती है। उपर्युक्त का निहितार्थ यह है कि 'वास्तविक स्थायी आय में परिवर्तन वर्तमान मापित आय में परिवर्तन से कम होता है'।

फ्रीडमैन ने इस संबंध का प्रयोग मुद्रा वेग की चक्रोन्मुख गति की व्याख्या करने के लिए किया। किसी भी व्यापार चक्र के विस्तारकारी चरण के दौरान मुद्रा की माँग में वृद्धि आय

में वृद्धि से कम होती है। यह इस तथ्य के कारण है कि स्थायी आय में वृद्धि वास्तविक मापी गई आय में वृद्धि के सापेक्ष कम होती है (देखें समीकरण (8.17))। परिणामतः, मुद्रा के वेग में वृद्धि देखी जाती है। दूसरी ओर, व्यापार चक्र के मंदी के दौर में, मुद्रा की माँग में कमी आय की तुलना में कम होती है। यह इस तथ्य के कारण है कि स्थायी आय में गिरावट वास्तविक मापी गई आय में गिरावट के सापेक्ष कम होती है। परिणामतः, मंदी के दौरान मुद्रा के वेग में गिरावट देखी जाती है।

उपर्युक्त का निहितार्थ यह है कि मात्रिक मुद्रा आपूर्ति में किसी भी ज्ञात परिवर्तन से कुल व्यय में एक पूर्वानुमेय परिवर्तन होगा। इस प्रकार, फ्रीडमैन की मुद्रा की माँग वास्तव में मुद्रा के मात्रात्मक सिद्धांत का एक आधुनिक संस्करण है जहाँ मुद्रा मात्रिक कुल व्यय का प्राथमिक निर्धारक तत्व होती है।

8.4.3 फ्रीडमैन के मुद्रा–माँग सिद्धांत के निहितार्थ

फ्रीडमैन का मुद्रा माँग सिद्धांत के मुद्रा के सिद्धांत, व्यापार चक्र के अध्ययन और मौद्रिक नीतियों के संचालन हेतु अनेक रोचक सैद्धांतिक निहितार्थ दर्शाता हैं। वैसे इसे कुछ आलोचनाओं का सामना भी करना पड़ा है। ब्याज दर के प्रति मुद्रा माँग की असंवेदनशीलता को लेकर इस सिद्धांत की बहुत आलोचना की गई है। फ्रीडमैन की इस बात को लेकर भी आलोचना हुई है कि उसने मुद्रा की व्यापक परिभाषा दी है और उसमें ब्याज दर को आकर्षित करने वाली मुद्रा आपूर्ति के M3 (M1 व M2 के साथ–साथ) प्रकार का वहन करने वाले ब्याज को भी शामिल किया है।

इस प्रकार, मुद्रा की माँग पर ब्याज दर में बदलाव का समग्र प्रभाव नगण्य होता है। दूसरे, फ्रीडमैन ने अपने सिद्धांत में वेग की गणना में मापित आय और स्थायी आय के उपयोग की ओर संकेत करते हुए मुद्रा के आय वेग के चक्रीय उतार–चढ़ाव की व्याख्या की है। इस वेग के बकाया चक्रीय व्यवहार को केवल ब्याज दरों में होने वाले परिवर्तन के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, जो कि नगण्य होता है, और तदनुसार, फ्रीडमैन के इस विचार का समर्थन करता है कि नकद शेष राशि की माँग ब्याज दर के प्रति असंवेदनशील होती है।

फ्रीडमैन ने मुद्रा की आपूर्ति और ज्ञात मुद्रा आपूर्ति में परिवर्तन को दिया हुआ माना। उसने बैंकों को मुद्रा का उत्पादक माना। उसने मुद्रा आपूर्ति को प्रभावित करने वाले किसी भी कारक की संभावना से इनकार किया। बहरहाल, मुद्रा की आपूर्ति पर निर्णय कुछ चरों पर निर्भर करते हैं, जैसे –

(i) गैर–बैंकिंग वित्तीय मध्यस्थों द्वारा मुद्रा की जमा एवं निकासी प्रक्रियाएँ,
(ii) वाणिज्यिक बैंकों द्वारा केंद्रीय बैंक को व उससे ऋणदान एवं ऋणादान, तथा
(iii) केंद्रीय बैंक द्वारा प्रतिभूतियों का क्रय एवं विक्रय।

बोध प्रश्न 3

1) फ्रीडमैन के आधुनिक मात्रात्मक सिद्धांत में मुद्रा की माँग को निर्धारित करने वाले कारकों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) फ्रीडमैन द्वारा प्रतिपादित मुद्रा के मात्रात्मक सिद्धांत में मुद्रा का वेग कैसे निर्धारित होता है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) मान लीजिए कि मुद्रा की वास्तविक माँग प्रकार्यात्मक रूप $\frac{M^d}{P} = 0.20 \times Y$ में नजर आती है। फ्रीडमैन द्वारा विवक्षित मुद्रा के मात्रात्मक सिद्धांत संबंधी समीकरण का प्रयोग कर मुद्रा का आय वेग ज्ञात करें।

.....

.....

.....

.....

.....

4) मान लीजिए कि वास्तविक ब्याज दर $r = 10\%$ है। आय में किसी *अस्थायी* परिवर्तन पर विचार करें, यथा $\Delta y_t = 1$, जो कि $\Delta y_{t+j} = 0, j = 1,2,\ldots$ के साथ है। अब स्थायी आय में कितना परिवर्तन होगा? यदि आय में *स्थायी* परिवर्तन हुआ हो, यथा $\Delta y_{t+j} = 1\,, j = 1,2,\ldots$, तो आपके विचार से स्थायी आय में कितना परिवर्तन होगा?

.....

.....

.....

.....

.....

8.5 सार संक्षेप

मुद्रा की माँग संबंधी उत्तर–केन्जियन सिद्धांतों ने मुख्य रूप से या तो लेन–देन के प्रयोजन या फिर नकद शेष राशि रखने के सावधानी प्रयोजन पर जोर दिया। मुद्रा के विनिमय–माध्यम प्रकार्य ने ही लेन–देन के मॉडलों को जन्म दिया। बॉमोल (1952) और टोबिन (1957) ने मुद्रा को एक माल–सूची वस्तु के रूप में माना, जिसे लोग लेन–देन के उद्देश्य के लिए रखना चाहते है, बशर्ते लेन–देन का स्तर ज्ञात और निश्चित हो।

यद्यपि वैकल्पिक तरल परिसंपत्तियाँ मुद्रा की तुलना में बेहतर लाभ दर पर उपलब्ध हो जाती हैं, इन परिसंपत्तियों को मुद्रा में बदलने के कारण कुछ निश्चित लेन–देन लागत आती है। इस तरह की लेन–देन की लागत मुद्रा धरने को ही सही ठहराती है।

फ्रीडमैन (1958) ने उपभोक्ता वस्तु के रूप में मुद्रा का विश्लेषण किया। साथ ही, उसने किसी उपभोक्ता टिकाऊ सामान की माँग के प्रत्यक्ष विस्तार के रूप में मुद्रा की माँग का भी विश्लेषण किया, जिसको फिर उपभोक्ताओं के उपयोगिता फलन में प्रवेश मिला।

फ्रीडमैन ने मुद्रा को एक ऐसी परिसंपत्ति के रूप में लिया जो सेवाओं का प्रवाह प्रदान करती है और उनमें अवसर लागत चरों की एक विस्तृत शृंखला देखी जाती है। फ्रीडमैन की स्थिर मुद्रा माँग व्यक्तिगत उपभोक्ताओं की स्थायी आय का फलन होती है।

8.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) यदि ऑनलाइन भुगतान डेबिट कार्ड / ई–वॉलेट के माध्यम से किया जा रहा है तो यह हाथ में नकदी रखने के समान ही है। दूसरी ओर, यदि यह क्रेडिट कार्ड द्वारा किया जाता है तो किसी भी महीने के क्रेडिट कार्ड बिल का भुगतान उस महीने के वेतन (जैसे ही वह अगले महीने की शुरुआत में चुकाया जाता है) से किया जा सकता है और शेष वेतन राशि ऋणपत्रों में निवेशित रह सकती है, जिसे मुद्रा में बदलने की आवश्यकता नहीं होगी। अतः, वित्तीय अवसंरचना एवं जोखिम के प्रति दृष्टिकोण के आधार पर नकदी रखने और ऋणपत्रों को मुद्रा में बदलने की आवश्यकता अपना महत्व खो देगी।

2) किसी व्यक्ति के लिए लेन–देन की इष्टतम संख्या है : $n = \sqrt{\frac{r.T.y}{2.b}}$.

   मूल्य स्तर = 1, वास्तविक आय Y/P = रु. 30000 / रु.1 = 30000

   T = 1 माह = 30 दिन

   वास्तविक ब्याज दर 10% = 0.1

   वास्तविक दलाली लागत = मात्रिक दलाली लागत / मूल्य स्तर

   = रु. 5000 / रु. 1 = 5000

   इसे सूत्रों में रखने पर हमें लेन–देन की इष्टतम संख्या प्राप्त होती है

   $= \sqrt{\frac{0.1\times30\times30000}{2\times5000}} = \sqrt{9} = 3.$

3) यदि क्रेडिट कार्ड धोखाधड़ी की लहर है तो लेन–देन हेतु मुद्रा की माँग आरंभ में बढ़ेगी। इसका अर्थ है कि LM वक्र बाईं ओर खिसक जाएगा और ब्याज दर बढ़ जाएगी। यह अंततः लेन–देन हेतु मुद्रा की माँग को कम कर सकता है।

बोध प्रश्न 2

1) यहाँ ऋणपत्र पर ब्याज की प्रतिशतता 6% है।

   बाजार की लाभ दर $r = \frac{Rs.6}{Rs.120} \times 100 = 5\%$

   $\bar{g}$ = औसत प्रत्याशित पूँजीगत लाभ = 15%

   σ_g = किसी भी ऋणपत्र पर लाभ का मानक विचलन = $\pm$ 4%

   [15% और 11% ; तथा 15% और 19% के बीच अंतर]

   समीकरण (8.14) के अनुसार, जोखिम में एक प्रतिशत की वृद्धि के कारण ऋणपत्र से कुल लाभ में प्रतिशत वृद्धि :

$$\frac{d\bar{R}_T}{d\sigma_T} = \frac{r+\bar{g}}{\sigma_g} = \frac{5\%+15\%}{4\%} = 5\%$$

2) दोनों प्रकार के ऋणपत्रों के लिए, ऋणपत्रों से औसत प्रत्याशित लाभ एक समान, यथा, $\bar{g}$ है। तथापि, एक में दूसरे की तुलना में अधिक जोखिम / अनिश्चितता (σ_g) होती है। तदनुसार, 66.7% संभावना है कि वास्तविक g, जो कि निवेशक को प्राप्त होगा, सीमा $\bar{g} \pm \sigma_g$ में रहेगा। अतः, जहाँ σ_g अधिक है, अनिश्चितता का दायरा बढ़ता है, और इस प्रकार के ऋणपत्र को कम पसंद किया जाएगा।

बोध प्रश्न 3

1) फ्रीडमैन के सिद्धांत में, स्थायी आय में वृद्धि से मुद्रा की माँग में वृद्धि होती है। मुद्रा के सापेक्ष ऋणपत्रों पर लाभ में वृद्धि होती है और मुद्रा के सापेक्ष इक्विटी पर लाभ से मुद्रा की माँग में कमी आती है। मुद्रा पर लाभ के सापेक्ष वस्तु पर लाभ में वृद्धि, जो कि मुद्रा पर लाभ के सापेक्ष मुद्रास्फीति की प्रत्याशित दर है, मुद्रा की माँग में कमी ला देगी।
2) वेग वास्तविक और स्थायी आय के अनुपात से निर्धारित होता है। जब विस्तार में वास्तविक आय बढ़ती है तो स्थायी आय कम तेजी से बढ़ती है। इस प्रकार, मुद्रा की माँग आय की तुलना में कम तेजी से बढ़ती है, और वेग बढ़ता है (और संकुचन के लिए इसका विपरीत भी सत्य है)। फ्रीडमैन के सिद्धांत में ब्याज दर मुद्रा के वेग को प्रभावित नहीं करती है। ऐसा इस तथ्य के कारण है कि मुद्रा व अन्य परिसंपत्तियों पर सापेक्ष लाभ अपेक्षाकृत स्थिर होता है।
3) $V = \frac{Y}{\frac{M^d}{P}} = \frac{Y}{0.20\,Y} = 5$
4) $\Delta y_p = \frac{0.10}{1+0.10}\Delta y_t = 0.09$ आय में अस्थायी परिवर्तन के लिए
   $\Delta y_p = \frac{r}{1+r}.\frac{1+r}{r} = 1$ आय में स्थायी परिवर्तन के लिए।
   विस्तृत विवरण के लिए समीकरण 8.18 देखें।